गुलदस्ता

काव्य संग्रह

श्यामपालसिंह चौहान 'श्याम'

गुलदस्ता

काव्य संग्रह

श्यामपालसिंह चौहान ‘श्याम’

प्रकाशक :

M

Publishers : **Melhorn Books India**
Melhorn Consulting (P) Limited
1103, Paras Tiariya, Sector 137, Noida,
Delhi, NCR, INDIA-110035

गुलदस्ता (काव्य संग्रह)

by : श्यामपालसिंह चौहान 'श्याम'

ISBN : 978-81-955940-0-9

© श्यामपालसिंह चौहान 'श्याम'

प्रथम संस्करण : **2022**

मूल्य : ₹ 200/-

प्राप्तिस्थान :

विजय तिवारी

9, माधव पार्क विभाग - **2,**
माधव इन्टरनेशनल स्कूल के पास,
वस्त्राल रोड, वस्त्राल, अहमदाबाद - **382418**

कम्प्यूटर टाईप-सेटिंग एन्ड ले-आउट : **महेन्द्र पंड्या**

फागुन ग्राफिक्स

48, पूर्वीनगर, घोडासर केनाल, भाडुआत नगर के पास,
घोडासर, अहमदाबाद - **380 050**
(M) 98255 04661
Email : fagungraphics@gmail.com

Priters :

पार्थ ग्राफिक्स एन्ड प्रिन्टर्स

4-FF, श्रद्धा कोम्प्लेक्ष, गोविंदवाडी,
इसनपुर, अहमदाबाद

समर्पण

माता-पिता की ममता, लालन-पालन और
आशीर्वाद देकर मेरे जीवन को सार्थकता देनेवाले

मेरे चाचा स्व. नवाबसिंह

एवं

स्व. चाचीजी प्रभावती देवी

को...

सादर समर्पित

अपनी बात

मेरी काव्ययात्रा का प्रारम्भ कॉलेज काल से हुआ । उन दिनों मनोरंजन का साधन एक मात्र रेडियो ही था । सिलोन रेडियो से प्रसारित बिनाका गीतमाला को लोग बड़े चाव से सुनते थे । मैं कभी-कभी उन गीतों पर पेरोड़ी बनाया करता था । इसके अलावा जहाँ कहीं भजन कीर्तन होता वहाँ पहुँच जाता था । सुने हुए भजन कीर्तनों में से मन को छू जाते उनको स्मरण कर स्वयं लिखता । जब कोई कड़ी याद न आती तो उसे स्वयं पूर्ण करता । इस प्रकार उनमें कुछ पंक्तियाँ मेरी तरफ से जुड़ जाती ।

यूँ तो हाईस्कूल के समय मुझे प्रचलित कवियों की कविताएँ संग्रह करने व याद करने का शौक था । राधेश्याम रामायण एवं रामचरित मानस की चौपायियाँ सुनने-सुनाने तथा अंताक्षरी में भी बढ़ चढकर भाग लेता था । मुझे गीत एवं कविता लिखने की प्रेरणा मेरे अध्यापक मित्र अवधेश बहादुरसिंह से मिली । उन्होंने अपने मित्र को काव्यमय पत्र लिखकर मुझे सुनाया । उस पत्र को सुनकर मुझे भी काव्यमय पत्र लिखने की प्रेरणा मिली । वहीं से स्वतन्त्र काव्य रचना की अथश्री हुई ।

अध्यापन काल दरमियान मैं अपने सहअध्यापक मित्रों को अपनी रचनाएँ सुनाया करता था । जिसमें कभी प्रशंसा और कभी मौन अरुचि भी प्राप्त होती । इन्हीं दिनों में मेरा सेवाराम गुप्ताजी से परिचय हुआ, जो स्वयं गुजराती माध्यमिक विद्यालय में अध्यापन कार्य कर रहे थे । गुप्ताजी अहमदाबाद की प्रसिद्ध हिन्दी साहित्यिक संस्था ''साहित्या-लोक'' से जुड़े हुए थे । उनकी प्रेरणा से मैं भी उस संस्था का सदस्य बन गया । साहित्यालोक की मासिक गोष्ठियों में शरीक होने एवं उसके सदस्य कवि मित्रों से परिचित होने का अवसर मिला । गुप्ताजी और मैं अन्य शहरों से प्रकाशित होनेवाली मासिक एवं त्रैमासिकी पत्रिकाओं में गीत, गजल, दोहे, कुंडलियाँ आदि विधाओं की रचनाएँ प्रकाशनार्थ भेजते थे । उनके प्रकाशित होने पर मुझे अति प्रसन्नता होती । प्रारंभिक रचनाएँ हिन्दी विद्यापीठ की ''रैन-बसेरा'' नामक त्रैमासिकी में प्रकाशित होती रही । बाद में उस पत्रिका का प्रकाशन बंद हो गया ।

ग़ज़ल लेखन में मुझे अहमदाबाद के सिद्धहस्त ग़ज़लकार प्रो. श्री भगवानदास जैन एवं अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठित प्रसिद्ध ग़ज़लकार श्री विजय तिवारीजी का स्तुत्य सहयोग प्राप्त होता रहा है । प्रो जैन मेरे मित्र एवं सहअध्यापक स्व खेमराज जैन के अग्रेज हैं । उनका स्नेह एवं प्रोत्साहन मुझे अनुज की भाँति प्राप्त होता रहता है । वह मेरी रचनाएँ ध्यान से सुनते एवं उचित

सुझाव भी देते रहते हैं । इन महानुभावों का मैं तहेदिल से शुक्रगुजार हूँ ।

हालाँकि अब तक मेरी स्वतंत्र रुप से कोई पुस्तक प्रकाशित नहीं हुई है। सन् २०१९ में गुजरात साहित्य अकादमी गांधीनगर से ''क्या है हल'' नामक ग़ज़ल संग्रह मंजूर हुआ था किन्तु २०१९ के मार्च से २०२१ तक गठियाबाई की कष्टसाध्य बीमारी के कारण वह संग्रह प्रकाशित नहीं हो पाया । उसकी समय सीमा पूरी होने से अकादमी की पुनः मंजूरी के लिए भेजा जाना है । अभी प्रकाशित होने जा रहे 'गुलदस्ता' काव्यसंग्रह में गीत, कुंडलियाँ, दोहे, हाइकू एवं मुक्तक आदि काव्य विधाओं की रचनाएँ हैं । मेरी अब तक प्रकाशित रचनाएँ ''भाषासेतु'' त्रैमासिकी राष्ट्रभाषा कोलेज की ''राष्ट्रवीणा'' आदि में प्रकाशित होती रहती हैं । सहयोगी संकलन साहित्यालोक के प्रकाशन में ''जलते दीपक'', ''उजाले की ओर'', ''संवेदना के स्वर'' में मेरी रचनाएँ सम्मलित हैं । एम.जे. पुस्तकालय के संकलन काव्यमंजूषा भाग १-२ में मुझे स्थान मिला है । कानपुर से प्रकाशित संकलन ''दोहादीप'' एवं कानपुर से ही प्रकाशित ''स्वातंत्र्योत्तर कवि-कवियत्रियाँ'', ग्वालियर के संकलन ''साहित्यायन'', ''नई दिल्ली विश्व पुस्तक प्रकाशन'' के संकलन ''संस्कृति के कमल'' आदि संकलनों में भी रचनाएँ प्रकाशित हुई हैं । लखनऊ की ''चेतनास्त्रोत'' त्रैमासिकी में निरन्तर मेरी रचनाएँ प्रकाशित होती रहती हैं ।

मेरे काव्यसंग्रह ''गुलदस्ता'' का प्रकाशन कार्य श्री विजय तिवारी के करकमलों से होने जा रहा है । श्री विजय तिवारी हिन्दी साहित्य में अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठित और सम्मानित साहित्यकार हैं । विशेष रुप से ग़ज़ल के क्षेत्र में आपका स्थान उस्ताद शायरों में माना जाता है। श्री तिवारीजी के ही देखरेख में यह संकलन प्रकाशित हो रहा है। अपने व्यस्ततम समय में से इसके लिए आपने समय निकाला है इसके लिए मैं हृदय से आपका आभारी हूँ ।

मेरे बाल्यकाल में ही पिताजी का स्वर्गवास होने के पश्चात मुझे शिक्षा दिलाने की जिम्मेदारी मेरे स्व. चाचाजी नवाबसिंह एवं स्व. चाचीजी प्रभावती का पूर्ण सहयोग रहा है । इन दोनों पूज्यनियों की आत्माओं को सादर प्रणाम करते हुए अपनी अन्तरात्मा से आभार व्यक्त करता हूँ । इनके आर्थिक सहयोग के बिना मेरे शिक्षक बनने का सपना अधूरा ही रह जाता । अंत में साहित्यालोक की गोष्ठियों में मेरी रचनाओं पर सुझाव और सराहना व्यक्त करने वाले सभी कवि मित्रों को तेह दिल से धन्यवाद देता हूँ ।

A/551, महावीर प्रभु सोसायटी, – श्यामपालसिंह चौहान 'श्याम'
अर्बुदा नगर, ओढव, अहमदाबाद - 382415

विविध रंगों के फूलों की सम्मोहक ख़ुशबू से महकता काव्यमय गुलदस्ता

आदिकाल से आजतक इस विश्व में मन-मस्तिष्क को स्वस्थ एवं आनन्दित करने और आनन्दित रखने के लिए सर्वव्यापी साधन है तो वो है साहित्य । और साहित्य में भी काव्य विधा का स्थान महत्वपूर्ण है । छंद बद्ध गेय रचनाएँ मन को मंत्रमुग्ध कर देती हैं । हृदय यदि संतप्त है तो कविता और गीत के माध्यम से हमें आश्वासन और सही मार्गदर्शन मिलता है । और हम अपने दुःख को दूर करने के उपाय कर सकते हैं । आनन्द के अवसर पर विषयोचित रचनाएँ हमारी प्रसन्नता, हमारे आनन्द को दुगना कर देती हैं । प्रसंगोचित रचनाओं से हम अपने जीवन की रिक्तता को पूर्ण करने के प्रयत्न करते हैं । और इसमें हमें सफलता भी प्राप्त होती है । राष्ट्र के पश्चिमांचल के इस गुजरात की गुर्जर भूमि से हिन्दी के ऐसे सेवक से आप सभी का परिचय करवा रहा हूँ, जिन्होंने अपना पूरा जीवन हिन्दी सेवा को समर्पित कर दिया । श्री श्यामपाल सिंह चौहान'श्याम' । विद्यालय में शिक्षक के सम्मानित पद पर अपनी सेवाएँ देते हुए हिन्दी के सम्मान को कभी नहीं भूले ।शिक्षक के पद से निवृत्त होने तक और आजतक तमाम शारीरिक परेशानियों के बावजूद चौहान जी की कलम अनवरत रूप से नयी-नयी स्तरीय और श्रेष्ठ रचनाएँ करती रही है ।

गुलदस्ता शीर्षक से आपका यह सर्वप्रथम काव्यसंग्रह प्रकाशित हो रहा है। इस काव्यसंग्रह में जीवन के विविध रंगों को विविध छंदों के माध्यम से वैविध्यपूर्ण ढंग से बखूबी चित्रित किया गया है । इनकी प्रत्येक रचना अपने आप में अनूठी है । कथ्य और शिल्प दोनों दृष्टि से चौहान साहब की रचनाएँ बहुत श्रेष्ठ बन पड़ी हैं । और क्यों न हो पूरे जीवन का अनुभव और उसे छंद में पिरोकर शब्दों से सजाकर प्रस्तुत जो किया है । आइए आप सभी को कुछ झलकियाँ बताता चलूँ ।

काव्य संग्रह का प्रारम्भ परम्परागत ढंग से माँ सरस्वती की वंदना से हुआ है । सरस्वती वंदना का शब्द संयोजन बहुत श्रेष्ठ है । इसे गाया जाए तो बहुत ही सुन्दर लगेगा । कवि को भारतीय संस्कृति और परम्परा पर बहुत अभिमान है । और यह प्रत्येक भारतीय को होना चाहिए । भारत की गौरव गाथा पर गौरवान्वित होते हुए वे हमारा वतन रचना में कहते हैं-

है पुरानी धरोहर मेरे देश की
सभ्यता-संस्कृति ये मेरे देश की

योगियों की तपस्या की भूमि है ये
ऋषियों-मुनियों का इतिहास प्यारा वतन

सम्मान पूर्वक जीवन ही श्रेष्ठ माना जाता है। और श्रेष्ठता तथा सम्मान से जीवन जीने के लिए, लोगों में आत्मविश्वास जगाने के लिए कवि की यह रचना पूर्णतः सक्षम और प्रभावशाली है -

नहीं झुकूँगा, नहीं रुकूँगा
आगे-आगे नित्य बढ़ूँगा
गति देने जीवन नौका को
एक तीव्र जल धार बनूँगा
यारों मैं अंगार बनूँगा ।

यह पूरी रचना बेहद खूबसूरत और बहुत बेहतरीन है। इसके लिए चौहान साहब यकीनन साधुवाद के पात्र हैं । यह रचना समाज के सभी वर्ग के व्यक्तियों को जागृत करने में पूर्णतः सक्षम है। आज की युवा पीढ़ी और नौनिहालों में देश प्रेम की मसाल प्रज्ज्वलित करती हुई यह रचना देखिए—

आओ चलो, आओ चलो चलो आओ रे,
मेरे बाल साथियों, आओ आओ रे,
नद-नदी प्रवाह तुम, प्रशस्त पुण्य राह तुम,
आज मन में भर उमंग, गीत गाओ रे,
देश भक्त बन निडर, सत्य-निष्ठ अग्रसर,
बन पयोधि की तरंग, बढते जाओ रे -

इस तरह की अनेकों रचनाओं से यह काव्य संग्रह भरा पडा है ।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि 'श्याम' जी का यह काव्य संग्रह हिन्दी साहित्य जगत को अयश्य समृद्ध करेगा । हिन्दी साहित्य जगत में इस संग्रह का स्वागत होना ही चाहिए ।

'श्याम'जी को इस काव्य संग्रह के प्रकाशन पर्व पर बहुत बहुत हार्दिक बधाइयाँ और शुभकामनाएँ ।

महाशिवरात्रि
1 मार्च, 2022

– विजय तिवारी
संस्थापक एवं अध्यक्ष
साहित्य सेतु परिषद
विश्व हिन्दी साहित्य संस्थान (यूट्यूब चैनल)
http://vtlibrary.com
अहमदाबाद, गुजरात

अनुक्रमणिका

१. सरस्वती वंदना	१०
२. मधुमास आया	११
३. हमारा वतन	१२
४. है याद उसी की आती	१३
५. दीप	१४
६. अधूरी कामना	१५
७. यारो, मैं अंगार बनूँगा	१७
८. अमीरस बरसे आँगन में (गीत)	१८
९. दोहा	१९
१०.शास्त्रीजी की पुण्यतिथि पर	२१
११.प्रातःआया	२२
१२.निर्धन	२३
१३.तेरी तस्वीर - १ (गीत)	२६
१४.उस ओर	२७
१५.नूतन वर्षाभिनंदन	२८
१६.भारत माता की पुकार	२९
१७.परस्पर मेल	३०
१८.चार पद	३१
१९.आह्वान, गुरुओं को	३३
२०.निशा परी	३५
२१.चिकने घड़े	३६
२२.कली की फटकार	३७
२३.जवाब खटमल का	३८
२४.हिन्दी वतन का स्वाभिमान	३९
२५.पथिक पथ खाली नहीं है	४०
२६.भूकंप एक जलजला	४१
२७.क्रांति के गुब्बारे	४३
२८.अभियान गीत	४५
२९.बदरिया उठी (गीत)	४६
३० धरा की करवट	४७
३१.सुघड़ सुहानी रात	४८
३२.ऋतुओं की रानी, वर्षा	४९

३३.जन्मदाता का प्यार ५०
३४.मधुमास की चुभन ५१
३५.क्या पहचान तुम्हें दूँ रानी ? ५२
३६.युग प्रहरी 'सरदार' ५३
३७.सत्यमेव जयते ५५
३८.स्वतंत्र जीवन के प्रेरक ५७
३९.जवानी की उलझन ५८
४०.पर मैं किससे खेलूँ होली ? (गीत) ५९
४१.यदि यह देश बचाना है ६०
४२.चिड़िया का शोक ६३
४३.मैं तुम्हारी बाँसुरी हूँ (गीत) ६५
४४.छब्बीस जनवरी - गणतंत्र-दिवस ६६
४५.भाव निर्झर ६७
४६.जागो ग्राम वासियो ६८
४७.रात आई, खिला चाँद मुन्ने ७०
४८.टिमटिमाती शमा ७१
४९.कब तक देखूँ राह तुम्हारी (गीत) ७२
५०.गोपियों का उपालंभ ७३
५१.हरि जन बन के ७४
५२.अछांदस-छांदस कविता ७५
५३.बेटी की पीड़ा ७७
५४.याद क्यों न आई है ७९
५५.वसंत आगमन ८०
५६.सदाबहार वसुधा ८१
५७.कहीं अंधेरी, कहीं उजाली ८३
५८.ताकत हिन्दुस्तानी ८५
५९.मैं करुँ तुम्हें आह्वान ८७
६०.गरीबों का जीना भी है कोई जीना ८८
६१.कुंडलियाँ ८९
६२.हायकू ९१
६३.वनचरों की रेलगाड़ी ९३
६४.आई बहार (गीत) ९५
६५.मुक्तक काव्य ९६

० ० ०

१. सरस्वती वंदना

हंस वाहनी सरस्वती माँ,
हमको यह वर दो;
बुद्धि प्रखर हो, ज्ञान सभर हो,
स्वर में लय भर दो ।
गीत सदा हम ऐसे गायें,
सोये मन को पुनः जगायें;
शोषित पीड़ित मानव जन को,
उत्पीडन सें मुक्ति दिलायें;
माँ तब कृपा दृष्टि हो जाये
सिर पर कर धर दो ।
बने लेखनी सुरसरि धारा,
ज्ञानामृत जल, प्रेम किनारा;
कोमल निर्मल भाव भरे हों,
हो प्लावित जगजीवन सारा;
भारत माता की सेवा में
रत मम मन कर दो ।
मधुर कंठ हो मेरी वाणी,
नित्यवंद्य हे माँ ब्रह्माणी !
हों विचार तरु दाँव सरीखे,
रसना बने जगत कल्याणी;
वीणावादिनि, कविकुल जननी !
करुणामय उर दो ।

२. मधुमास आया

सुन सखी, मधुमास आया !
प्रिय मिलन की आस लाया ।
आम्र कुंजों पर सुगंधित
बौर की कलियाँ खिली हैं,
कोयलों की कूक से
सारी दिशाएँ भी हिली हैं,
तितलियों का नृत्य भँवरों
का गुंजन चहुँपास छाया ।
खेत-बन-बागों की शोभा
श्री निराली हो रही है;
आज वसुधा जैसे दुल्हन
गौनेवाली हो रही है;
प्रकृति का यह रूप अनुपम,
हर किसी का मन लुभाया ।
राग फगुआ हर गली में,
ढोल-ढक पर गूंजता है
मन उमंगों की तरंगों
में सहारा ढूँढता है;
देख कर ये रंग बसंती,
है मगन हर एक काया ।
हर घडी के शुभ शुकन
झकझोर मुझसे कह रहे हैं;
उठ अली, रूठे सजन
तेरे पुनः आ घर रहे हैं;
मिलन की है निकट बेला,
धड़कनों ने कह सुनाया ।

३. हमारा वतन

खूबसूरत ज़मीं पे हमारा वतन;
ये हमारा वतन है हमारा चमन ।
है पुरानी धरोहर मेरे देश की
सभ्यता-संस्कृति ये मेरे देश की;
योगियों की तपस्या की ये भूमि है,
ऋषियों-मुनियों का इतिहास प्यारा वतन ।
ये हिमालय जो दुनिया का सरताज है,
इस ज़मीं पे वो जन्नत की परवाज़ है
शान इसकी निराली हमेशा से है,
गंगा-यमुना की धारा हमारा वतन ।
दुनियावालों न अब हमको भरमाइये,
हो गया बस बहुत अब ठहर जाइये;
उलटे पांसे पड़ेंगे तुम्हारे सभी,
छूट अब फिर न देगा दुबारा वतन ।
हमने दुनिया के लोगों को आजमाया है,
प्यार देकर कई बार अपनाया है;
लूटकर घर हमारा जो मालिक बने,
काट सिर लेगा उनका हमारा वतन ।
तीन रंगों का परचम हमारा जो है,
शान्ति, समृद्धि, सच्चाई का घर वो है;
चक्र कहता तरक्की से पग न रुके,
चूम ले आसमां को हमारा वतन ।
जो न आपस में हम फिर से टकरायेंगे,
आग घर में न मज़हब की फैलायेंगे;
कोई ताकत न फिर तोड़ सकती हमें,
होगा खुशहाल फिर से हमारा वतन ।

४. है याद उन्हीं की आती

है याद उन्हीं की आती,
मन मे था जिनको माना;
सब कुछ ही भुला दिया था,
जब उनको था पहचाना;
मैं लाख भूलाना चाहूँ
पर नहीं भूल पाता हूँ;
क्या करुँ साँस थम कर है
धीरे से यह कह जाती;
है याद उन्हीं की आती ।
जब है ख्यालों में आती,
उनकी वह भोली सूरत;
आँखें नहीं देख अघाती
वह सुघड़ सलोनी मूरत
मन-मंदिर में बिठलाकर,
उनको भरमाना चाहें,
पर विरह वेदना उनकी,
नयनों से नीर बहाती
है याद उन्हीं की आती ।
इन पथराई आँखों में,
इक सपना-सा छा जाता;
मन पास उसी के जाकर,
है बार-बार समझाता,
लेकिन असफल होकर फिर
साहस खोकर रह जाता;
अब तो उनकी यादें ही
रह गई है बनकर थाती;
है याद उन्हीं की आती ।

५. दीप

मैं ज्योति सभी के घर की,
करता हर जगह प्रकाश;
देता जग को उजियाला,
कर गहन तम का नाश ।
दीपक मुझको हैं कहते,
ये सारे दुनिया वाले;
पर प्यार मुझे तो करते,
जो हैं बिलकुल मतवाले ।
बस एक बात का दुःख है
कितने ही मेरे प्यारे;
मिलने मुझसे हैं आते,
पर मिट जाते हैं सारे ।
आते तो अंक में भरने,
मम लौ को सहित हुलास;
पर भोले नहीं समझते !
क्या रखना मुझसे आस ।
जो खुद जलता रहता है,
वो औरों को क्या देगा;
दीपक-लौ मैं ही उसका,
जीवन संदेश मिलेगा ।
दुनिया से कुछ न लेकर,
मैं खुद जलता रहता हूँ
सुनसान अँधेरों का नित,
भक्षण करता रहता हूँ ।
हाँ एक बात के कारण,
अफ़सोस मेरा मिट जाता,
नित-नित जलते रह कर भी,
हूँ जग को राह दिखाता

६. अधूरी कामना

हो अस्त चुका था सूरज
था अंधियारा छाने को;
तब शांतिपूर्ण कानन में,
अपने प्रिय से मिलने की ।
निकली थी रजनी वाला
तन खूब सजाये सुन्दर,
प्रीतम प्रभात था उसका,
जाना था पार समुन्दर ।
नीलाम्बर पट की सारी,
तन पर भी उसने धारी;
झिलमिल करते तारों से,
थी अपनी माँग संवारी ।
मस्तक पर पूर्ण प्रकाशित,
थी चन्द्रमणि अति शोभित;
ज्योतिस्ना जिसमें लय थी
अपने स्वरूप में मोहित ।
थी सहमी-सहमी चलती,
पैरों को गिन-गिन रखती;
देखे न कहीं से कोई,
इससे थी मन में डरती ।
कलकल करती बहती थी
एक नदी उसी कानन में;
रजनी को जाते देखा
सोचा उसने निज मन में ।

रजनीवाला है यह तो
क्यों निकली आज अकेली;
पूछा फिर बढ़कर उसने
जाती हो कहाँ नवेली ?
प्रीतम प्रभात से मिलने,
रजनीवाला तब बोली,
यह कहती सहमी ध्वनि में
लगती थी वह अति भोली ।
दूरी थी बिलकुल थोड़ी
क्या कहूँ मिलन बेला को
आँधी एक ऐसी आई
ले उड़ा गई रजनी को
प्रीतम प्रभात तो आया
पर रात ठहर न पाई;
अरुणोदय के पहले ही
लेनी पड़ गई विदाई ।
रजनी प्रभात का मिलना
युग-युग से रहा अधूरा
हर निशि रजनी सजती है
कब होगा सपना पूरा ।

७. यारो, मैं अंगार बनूँगा

नहीं झुकूँगा, नहीं रुकूँगा,
आगे आगे नित्य बढ़ूँगा,
गति देने जीवन नौका को
एक तीव्र जलधार बनूँगा ।
यारो मैं अंगार बनूँगा ।
जो रोकेगा मेरे पथ को,
चूर करुँगा उसके मद को,
आँधी या तूफान भले हो
मैं उनसे ललकार लड़ूँगा ।
यारो, मैं अंगार बनूँगा ।
मैं विद्रोह करुँगा डटकर,
पग न रखूँगा पीछे हटकर;
कभी कहीं अन्याय हुआ तो
दामिनि-द्विति तलवार बनूँगा ।
यारो, मैं अंगार बनूँगा ।
दूर हटेगी सब बाधाएँ
फट जायेगी सब चट्टानें;
बड़बानल के तीव्र ज्वार-सा
जब लेकर हुंकार उठूँगा ।
यारो, मैं अंगार बनूँगा ।
ध्येय यही होगा अब मेरा,
हो सबके हित सुखद सबेरा;
ऋतु वसंत फूले सबके हित
जिसका मैं श्रृंगार बनूँगा ।
यारो, मैं अंगार बनूँगा ।

८. अमीरस बरसे आँगन में (गीत)

बदरा छाय रहे घनघोर
अमीरस बरसे आँगन में ।

आई पावस की ऋतु प्यारी
घिरी घटाएँ कारी कारी;
सुनि गर्जन घनबीच
मोर सब नाच रहे वन में ।
अमीरस बरसे, आँगन में ।

झूम उठे हैं वृक्ष लताएँ,
महक रही है क्यारी-क्यारी,
जगे भाग सूखी धरती के
अबके सावन में ।
अमीरस बरसे आँगन में ।

काले बादल गोरी बिजुरिया,
जैसे राधा और संबरिया;
खेलत वास ग्वालबालन रास
ब्रज के कानन में ।
अमीरस बरसे आँगन में ।

९. दोहा

राजनीति गंदी हुई, हुए भ्रष्ट आचार ।
है असत्य का चल रहा, भारी कारोबार ।।

आजादी से पूर्व के, नारे दिये भुलाय ।
आज पश्चिमी संस्कृति, रही देश में छाय ।।

सिंह सभी बूढ़े हुए, हुआ भेड़िया राज ।
दुश्कर्मी नेता बने, चिन्तित भेड़ समाज ।।

भ्रष्टाचारी हैं रहे, राजनीति में छाय ।
किसे समर्थन दीजिए, जनता मन सकुचाय ।।

टोलाशाही को यहाँ, कहा जाय गणतंत्र ।
गणपति के नख काटि के, गण सब हुए स्वतंत्र ।।

क्या होगा इस देश का, कहिए मेरे राम ?
भूल गये मुखिया सभी, गाँधी का पैगाम ।।

लज्जा भूषण नारि का, कहते वेद-पुराण ।
शर्म छोड़ नारी हृदय, बना आज पाषाण ।।

पुरुष समी नारी बने, इसमें नहीं विरोध ।
किन्तु नग्न हो दे रही, है कैसा ये बोध ?

पत्र-पत्रिका में छपे, विविध चित्र अश्लील ।
क्यों समाज की नारियाँ, करती नहीं अपील ।

हे माँ बहनों, भाइयों, क्यों सोते हैं आप ।
अगर नहीं जाग्रत हुए, और बढ़ेगा पाप ।।

चाहे तुम गीता पढ़ो, चाहे पढ़ो कुरान ।
कहें सभी सद्ग्रंथ यूँ, नेक बनो इंसान ।।

मानवता ही एक है, सब धर्मों का सार ।
अपनाओ मानव इसे, तज अनुचित व्यवहार ।।

द्वेष बढाए दिल मैं जो, नहीं सही वह धर्म ।
प्रेम-प्रीति की वृद्धि हो, यही धर्म का मर्म ।।

भटक रहे जो मार्ग में, होकर लक्ष्य विहीन ।
ऐसे मानव हैं सदा, दीनों से भी दीन ।

छीना-झपटी से मिले, जो धन-वैभव-मान ।
कभी न दे संतोष वह, सुन मानव दे ध्यान ।।

जग कर्ता की है मनुज, सर्वश्रेष्ठ संतान ।
फिर क्यों नीचे गिर रहा, दिन पर दिन इंसान ।।

धर्म जुनूनी लड़ रहे, मचा रहे आतंक ।
जाना सबको एक दिन, राजा हो या रंक ।।

कलियाँ मुस्काकर कहें, सुन मानव ये ज्ञान ।
झूठे चेहरे पर कभी, होय न मृदु मुस्कान ।।

प्रेम प्यासा है जगत, वाणी प्रेम पयोद ।
कृपण न बन बरसाइये, होय स्वयं मन मोद ।।

वृद्ध भये माता-पीता, नयन बहायें नीर ।
ठुकराती संतान है, कौन बँधाये धीर ।।

निज आश्रित का कीजिए, पोषण बल अनुसार ।
अन्न, वस्त्र, रक्षण दिये, खुले पुन्य का द्वार ।।

१०. शास्त्रीजी की पुण्यतिथि पर

हृदयटूँक हो रो उठता है,
करके याद तुम्हारी;
लालबहादुर थे तुम सचमुच,
वामन के अवतारी ।

तुम्हें देखकर सब कहते थे,
ये क्या कर पायेगा;
छोटा-सा ये मनुज देश के
कौन काम आयेगा ?

मिटा दिया दुनिया के भ्रम को,
निज कौशल्य दिखाकर;
करते हैं हम सब प्रणाम लो,
तुझको शीश नमाकर ।

अडिग रहो झंझावालों में,
तूने हमें सिखाया;
संकट की दुर्गम राहों में,
मारग नया दिखाया ।

युद्धक्षेत्र में विजय हेतु,
दृढ़ रहना जो बतलाया;
कर्म क्षेत्र में शांति हेतु
मर मिटना भी सिखलाया ।

नहीं पूर्ण हो सकती जो क्षति,
हुई तेरे जाने से;
स्वनिर्भर बन गया देश था,
एक तुझे पाने से ।

यही प्रार्थना है अब प्रभु से,
दे तुझसा ही नेता;
उन्नति करे देश उस पथ पर,
था जिसका तू ज्ञेता ।

कभी नहीं भूलेगे तुझको,
मानवता के पुजारी;
भरकर भी हो अमर
यही है श्रद्धांजलि हमारी ।

११. प्रातःआया

उठ रे मानव, प्रातः आया ।
जागृति नव साथ लाया ।
वृक्ष डालों पर चहक चिड़ियाँ उठी,
बन्द कमलों की मुखर कलियाँ उठीं;
पुनः अलि उन पर लगे हैं झूमने,
कालिमा की शून्य हो गलियाँ उठी,
विरह व्याकुल चक्रवाकों का युगल भी
तेरी खातिर मिलन की सौगात लाया ।
उठ रे मानव, प्रातः आया ।
प्रकृति की दैनिक क्रियाएँ हो रही है,
बंद आँखें पर तेरी क्यों सो रही हैं;
पक्षीगण की अवलियाँ तज नीड़ अपने,
पेट की खातिर विदाई ले रही है;
झाँकता प्राची से जो स्वर्णिम पुरुष
सुनले, तुझसे कहने कोई बात आया ।
उठ रे मानव, प्रातः आया !
प्राणी जग में है बहुत से रे अभागे !
पर नहीं करना उन्हें कुछ और आगे;
क्षुधातृप्ति के लिए सब काम उनके,
किन्तु तेरा कर्म है कुछ और आगे;
इसलिए उठ, जल्द से तैयार हो जा,
तू है बल-बुद्धि दोनों एक साथ पाया ।
उठ रे मानव, प्रातः आया ।

१२. निर्धन

रे निर्धन ! अभिशाप कौन तू ?
क्या तू जग का पाप ?
जीवनभर तू दु:ख उठाये,
फिर भी करता जाप ।

कड़ी तपन हो या सूरज की
या कि शीत महान;
मेहनत से मुँह कभी न मोडे,
वर्षा हो या हो तूफान ।

फिर क्यों तन नंगा है तेरा,
और भूखा है पेट ?
क्यों जग की बेगार करे तू,
बन धनवानों का आखेट ?

समय न तुझको दो पल थमकर,
गीत खुशी के गाये;
आ जाये यदि पर्व कोई तो,
हँसकर उसे मनाए ।

समय न तुझको, ग़म के दिन भी,
मन से शोक भुलाये;
बाँट पड़ा जग का ग़म तेरे
खुशी कहाँ से पाये ।

समय बुरी-दानत वालों को
बैठे मौज मनाएँ
रात-दिवस तू करे परिश्रम
फल उसका वो पायें ।

उन्हें समय है क्लब में जाकर
नाच-रंग में छाएँ;
जिसकी तुझसे न हो कल्पना
उस मस्ती को पायें ।

तेरा मुँह फट जाए देखकर,
ऐसे उनके काम;
न कि बहादुरी या दिलावरी
पर मोंगों का जाम ।

रोटी दाल मयस्सर तुझको,
होय न दोनों याम;
तुझे हमेशा इसकी चिन्ता,
और इसी हित सारे काम ।

घी और दूध से उन्हें न फुर्सत
क्या है रोटी दाल;
चिन्ता उन्हें आज खाने को,
मिले नया ही माल ।

कहते हैं भगवान बुरों को,
कड़ी सजा देते हैं;
पर मैंने तो दुष्कर्मी ही
खुश रहते देखे हैं ।

करते हैं वो पाप, उन्हें जग,
नहीं सजा देता है;
धन है उनके पास सदा जो
उन्हें बचा लेता है ।

हे निर्धन ! उस ठौर जहाँ
जग का मालिक रहता है;

न्याय दया की तू आशा
अपने मन में रखता है ।

आती याद कहानी मुझको,
बिल्ली बंदर वाली;
रोटी पायीं बिल्ली दोनों
पर बंदर ने खाली ।

हे माई ! ऐसी ही बिल्ली,
उनमें से तू एक;
मानवरूपी बंदर जग में
आँख उठाकर देख ।

इसीलिए कहता हूँ सुन
उठ, जाग खड़ा हो जा रे !
बन जा अपना भाग्यविधाता
आगे कदम बढ़ा रे ।

तेरा एक-एक श्रम बिन्दु,
रंग तभी लायेगा;
जब तेरा हक कोई तुझसे
छीन नहीं पायेगा ।

बढ़कर आगे अपना हक,
ललकार तुझे लेता है,
बन संगठित एकता से
बंदर खदेड़ देना है ।

तब वह रोटी तेरी होगी,
अपनों में मिल खाना;
खबरदार बंदर की बातों
में न कभी फिर आता ।

१३. तेरी तस्वीर - १ (गीत)

दूर पहुँचकर जब हम तुमसे
अपने मन को मना रहे थे
अरमानों की दुनिया खोकर
शून्यलोक में विचर रहे थे;

मन मानस ने पटला खाया,
अनुभूतियाँ बनी दुखदाई ।
तेरी तसवीर नहीं मिट पायी ।

वह तेरे नूपुर की मृदु ध्वनि,
जैसे हो खगकुल का कलरव;
गीत सदृश वो तेरी बातें
आती याद मुझे है जब तब;

तेरी मेरी प्रेम कहानी,
भटक रही हैं विरह सतायी ।
तेरी तस्वीर नहीं मिट पाई ।

तेरी याद की मीठी सिहरन
स्मृति-पटल पर जब छाती है,
विरह-वेदना की एक पीड़ा,
मन में मेरे छोड़ जाती है

सूनी है बरसाती रातें,
सारी दुनिया लगे पराई ।
तेरी तस्वीर नहीं मिट पाई ।

१४. उस ओर

ओ मांझी चल मुझको ले चल,
जहाँ शुभ्र हो नीरव थल;
बिछी हुई निःसीम शान्ति हो,
कहीं न जग का कोलाहल ।

अस्ताचल हो जहाँ सूर्य का,
और धरा का अंतिम छोर;
दूर जहाँ से क्षुद्र जगत हो,
कोई आ न सके उस ओर ।

चिड़ियों तक की चहक नहीं हो,
वनचर का आना-जाना
शून्य-शून्य ही दीख पडे तब
मानूँ एक सत्य जाना ।

देख चुका हूँ मैं यह जग
कटु अनुभूतियाँ मिली सारी;
न्याय नहीं है, दया नहीं,
बस पाप अधर्म अनाचारी ।

नहीं प्यार है यहाँ किसी में,
इर्या, द्वेष जिधर देखो;
कोई न चाहे ख्याति किसी की,
मन में जहर धुला देखो ।

१५. नूतन वर्षाभिनंदन

मंगलमय हो नया वर्ष यह
सुख समृद्धि बढे नव;
नव प्रभात में नल किसलय युत
कुसुमित हो आशा नव ।

टूटें बंधन रुढि पुरानी,
ले अँगडाई नई जवानी;
नये खयालों की वर्षा हो,
नदिया बहे अमी नव ।

कोई मानव बने न दानव,
भूलें हिंस्त्र-पने को हम सब,
जगे ज्ञान की ज्योति हृदय में
प्रसरित हो प्रकाश नव ।

हेल-मेल की फसल उगायें
ऐसी दीपोत्सवी मनायें;
ईर्ष्या, द्वेष भगाकर सारे,
बने हमारे हृदय विमल नव ।

दृढ़ प्रतिज्ञ और निडर बने हम,
कभी कर्म से मुँह न मोड़ें,
बने स्वयं के भाग्य विधाता,
जलें खुशी के दीप सदा नव ।

१६. भारत माता की पुकार

उगे सूर्य पहले पूरब में, हम पूरब के वासी,
न कोई एक धर्म है अपना, और न एक है रासी;
अलग-अलग है प्रान्त हमारे, हम बहु भाषा-भाषी,
पर भारत माँ एक है अपनी, हम हैं भारतवासी ।
वतन की आबरु ऐ भाइयों, हमको बढ़ानी है;
जो पहले थी वही इज्जत हमें फिर से बनानी है;
हैं हम सब टूट कर बिखरे हुए एक फूट के कारण,
पिरोकर प्रेम का धागा, नई माला बनानी है ।
बिखर मोती गये तो बीन कर फिर से पिरो लीजै,
जो रूठे हों उन्हें समझा बुझा, फिर से मना लीजै;
न टूटे स्नेह का यह तन्तु, इतना ध्यान रखियेगा;
बनाकर दिल को दरिया, प्रेम की नौका बहानी है ।
सुना है देश यह अपना, कभी सोने की चिड़िया था;
सजी हीरे जवाहरातों से, सुन्दर एक गुड़िया था;
हमारे द्वेष के कारण, लुटा यह देश सब जाने;
बुझाकर द्वेष की अग्नि नई सृष्टि रचानी है ।
न संभले अब तो फिर हमको, न कोई और मौका है,
भंवर में फँस रही देखो, हमारी आज नौका है,
बना हर बाँह को पतवार मौजों से निपट लींजै;
कमर कस कर तुम्हें किश्ती किनारे पर लगानी है ।

१७. परस्पर मेल

आओ करें परस्पर मेल;
मिलकर एक बनायें रेल ।
देश-प्रेम की रेल बनायें,
इन्जन प्रगतिशील लगवायें;
सूझ-बूझ को गार्ड बनाकर,
साहस का ईंधन भरवायें;

समता-लहर हरी झंडी हो,
साहस-धैर्य चलाये रेल ।
हिन्दू-मुस्लिम, सिक्ख-ईसाई
बौद्ध पारसी, जिन अनुयायी,
बने रेल के सजग मुसाफिर,
भारत माँ के सभी सिपाही;

मंजिल एक हमारी हो तो
कभी न होगा इन्जन फेल ।
छुक-छुक करती, धक-धक करती,
चले रेल भारत-माता की;
उत्तर-दक्षिण, पूरब-पश्चिम,
ध्वजा फिरे भारत-माता की;

सिर्फ भारतीय हम कहलाएँ
बढ़े परस्पर ऐसा मेल ।
हम आपस के बैरभाव को,
रेल-धुएँ की तरह उड़ा दें;
घाव भरें सारे जख्मों के,
वैमनस्य को दूर भगा दे;
कभी न पटरी से जो उतरें
ऐसी चले हमारी रेल ।

१८. चार पद

१

सखीरी, अब वर्षाऋतु आई ।
कारे-कारे घिरैं बदरवा, दिन में निशि हुई जाई ॥
रिमझिम-रिमझिम मोहा बरसे, देखु घटा धिरि आई ।
कुहू-कुहू कोयल की सुनि के विरह अगिनि बढ़ि जाई ॥
दामिनी दमके, छतियाँ धड़के, क्यों साजन बिसराई ।
देखु मोरगन गरजन सुनि के, नाचल पर फैलाई ॥
मधुरे बोल बोलि के पपीहा मोकूँ रह्यो लुभाई ।
करौं काह साजन घर नाहीं, जी मेरो घबराई ॥

२

सखि, वो मुझको यों भरमाते ।
कभी नजर में, कभी जिगर में, आन समा हैं जाते ॥
स्वप्न मनोरम उनके देखूँ, खुद को उनकी छाया लेखूँ ।
कभी कान में, कभी ध्यान में, मृदु गुंजन कर जाते ॥
जागूँ तो ख्यालों में छायें, सोऊँ तो सपना बन आयें ।
आँख बंद करते ही साजन, सन्मुख हठि आ जाते ॥
जाग रही हूँ या हूँ सोई, भ्रम में पड़ सकुचाऊँ ।
खुद को गई भूल मैं सजनी, प्रेम अगिनि बरसाते ॥

३

प्रभुजी, जल बिच मीन प्यासी ।
रह्यो आज लौं यही हाल मैं, मन में भरे उदासी ॥
बालापन बीत्यो अभाव में, यौवन में गल फाँसी ।
कोई न समझ्यो व्यथा हृदय की, लोगन के मन हाँसी ॥
पियत फिरयो जल ताल-तलैअन, लखि गंगा-जमुना सी ।
तृषा न अब लौं गई हृदय की, पीकर घट चौरासी ॥
मानव, तन में बौरायो मन, भारी भयो बिलासी ।
'श्याम' कहे प्रभु जाऊँ कहाँ अब, कहु मथुरा कहु कासी ॥

४

देखो कैसी टेक निभाई ।
सदा भक्त हित दौड़े आये, तनिक न देर लगाई ॥
जूठे बेर धरे शबरी नें, प्रभु हित करि पहनाई ।
भक्ति हेत कछु बिलग न मान्यो, माँगि-माँगि प्रभु खाई ॥
द्रोपदिचीर दुसासन खेंच्यो, सभा मध्य बिलखाई ।
सुनत हि संग छोडि कमला को, लूटत लाज बचाई ॥
ग्राह मारि गजराज उबार्‌यो, जल बिच भये सहाई ।
श्याम 'श्याम' को क्यों भूले हो, लेउ नाथ अपनाई ॥

१९. आह्वान, गुरुओं को

मचलते दिलों में हैं अरमान इनके,
अरे कुछ सहारा इन्हें दीजिए;
कही कूदकर फँस न जायें भंवर में,
कोई तो किनारा इन्हें दीजिए ।

है अल्हड़ जवानी बड़ी ही दीवानी,
इसे मोड़कर पंथ दिखलाइये;
न भटकें कदम लड़खड़ा करके इनके,
इन्हें राज जीने का सिखलाइये;

बढ़े मान गुरुओं का शिष्यों के मन में,
वो गुरमंत्र न्यारा इन्हें दीजिए ।

मिले प्यार और मार्गदर्शन जो सच्चा,
तो बच्चा बड़ा काम कर जायेगा;
जले ज्ञान की ज्योति दिल में जो उसके,
तो संसार में नाम कर जायेगा;

ज्ञान के आप भंडार हैं पूज्य गुरु,
ज्ञान का एक पिटारा इन्हें दीजिए ।

युवा आज के सब भटकते हैं फिरते,
नहीं मार्ग उनको अँधेरे में मिलता;
बने आप यदि पथ प्रदर्शक जो सच्चे,
दिखेगा उन्हें सूर्य फिर से निकलता;

आप तो हैं निशाकर-प्रभाकर सभी,
एक भी तो सितारा इन्हें दीजिए ।

आज की इस विकसती हुई नस्ल को
दिया चुंधिया है इस फिल्म-संसार ने;
जो कि साधन तमाशे का थे नट-नटी,
बने आदर्श वो इनके व्यवहार में,

मुक्ति पायें ये सब इस चकाचौंध से,
ऐसी युक्ति दुबारा इन्हें दीजिए ।

इनके आदर्श हों राम और कृष्ण से,
भीष्म, अर्जुन, शिबि, सत्य हरिश्चन्द्र से;
लक्ष्मीबाई, शिवा, राणा को याद कर,
चल सकें सिर उठाकर युवा गर्व से;

चढ़ सकें उस बुलंदी पै जिससे गिरे,
बंधुओं वो मीनारा इन्हें दीजिए ।

२०. निशा परी

श्रान्त, निश्चल, विस्मृत और मौन,
बता हे सुन्दरि, बाले कौन ?
नील-अम्बर की चूनर पहन,
जड़ाकर उसमें तारे गहन;
कहाँ से आकर के सुकुमारि ?
पड़ी हो बेसुध चित्त विसारि;
ज्योतिमय आलोकित मुखचंद,
मुस्कराहट आनन पर मंद;
प्रकाशित हैं जिसमें सब भौन
बता हे सुन्दरि बाले, कौन ?
अहा ! अब आया मुझको ध्यान,
अभी तक मुझे न था कुछ ज्ञान;
तुम्हारी की मैंने पहचान,
निशा की परी तुम्हारा नाम;
भ्रमण करने से सारी रात,
शिथिल हो रहे तुम्हारे गात;
कमलपट बंद मानो दृग द्वौन,
बता हे सुन्दरि बाले कौन ?
देख मुर्गे ने दी है बाँग,
करे दरबा खुलने की माँग;
नयन कर उन्मीलिन अब आज,
उठो, चल करो गमन का साज,
सजा रथ खोल पूर्व का द्वार,
देख रवि आ पहुँचा साकार;
प्रियतमा तू उसकी क्यों मौन ?
बता हे सुन्दरि बाले कौन ?

२१. चिकने घड़े

चुनाव के दौर में
भरमार होती है
सेवक रामों की ।
बरसाती मेंढकों की तरह
गलियों, चौराहों और
चौगानों में,
गला फुला फुलाकर
नम्रता की मूर्ति बने
एक एक मत के बदले
वादा करते हैं
पूरे पाँच वर्ष तक
सेवा करने का ।
सिर्फ वादा !
जनता की ओर से
भले ही लगी हो
प्रश्नों की झडी;
मजाल क्या कि
चेहरे की छतरी से
आक्रोश या निराशा की
एक भी बूँद
टपक जाये ।
या फिर,
यों कहिये;
उन पर असर ही
नहीं होता;
चिकने घड़े की तरह ।

२२. कली की फटकार

ऐ मधुप ! ये बता, क्यों तू मुझको जगा,
राग अपना ये गुनगुन सुनाने लगा;
मैं हूँ कच्ची कली, स्नेह-निर्झर पली,
गीत गाकर मुझे क्यों लुभाने लगा ।

मैं थी सोई अभी, बचपनी नींद में,
कूक कोयल की सुनकर किशोरी बनी;
पाँव रखते ही यौवन की दहलीज पर
साज वासंती सजकर तू आने लगा ।

मैं हूँ अल्हड़ अभी, हैं उम्मीदें बड़ी
फूल बनकर के मंहकूँगी, इस बाग में;
छीन उन्मुक्तता तू अभी से मेरी,
प्रेम-बंधन की बेड़ी, लगाने लगा ।

मैं हूँ उषा नयी, एक किरन प्रातः की
थोड़ी मुखरित हुई होठ वाली लिए;
आया जीवन में मेरे न मधुमास भी,
लूटने मेरा सौरभ, तू आने लगा ।

पूर्ण विकसित है होना, मुझे डाल पर,
रंग भरने हैं बाकी, मेरे भाल पर,
जाग कर मैंने देखी न, दिन की प्रभा,
लोरियाँ क्यों अभी से सुनाने लगा ।

देख बेशर्म इतना निगोड़े न बन,
पास मेरे है सौरभ तो काँटे भी हैं,
मुझसे मिलने का हक तूने, पाया कहाँ ?
आके नाहक मुझे, गुदगुदाने लगा ।

२३. जवाब खटमल का

एक रात सोते समय
अँधेरे का लाभ उठाकर
काट लिया खटमल ने मैंने,
तुरन्त बत्ती जलाई, और भागते हुए
चोर को घर दलोचा ।
अँगूठे और तर्जनी से पकड़कर
डाँटते हुए उससे पूछा,
''क्यों वे, असभ्यजन्तु !
शर्म नहीं आती तुझे,
थके-हारे इन्सान का लहू चूसने में ?''
उसने कहा, ''अरे महाशय,
मनुष्य का लहू तो मेरी खुराक है;
मैं जीता भी तो इससे ही हूँ ।
असंस्कारी, निशाचर जो ठहरा ।''
किन्तु तुम जिसे इन्सान कहते हो,
क्या वह, बिना सींग और बिना
दुमवाला संस्कारी प्राणी शोषण नहीं करता
अपनी ही जाति के अनेकानेक लोगों का ?
क्या इसी में है उसकी संस्कारिता
कुलीनता और सफेदपोशी ?
दरअसल वह बकरे की खाल में
खूँखार भेड़िया है ।
मैं तो क्षुधापूर्ति मर को लेता हूँ,
जरुरत से ज्यादा संग्रह नहीं करता ।''

२४. हिन्दी वतन का स्वाभिमान

हिन्दी है हम, है हिन्दी राष्ट्रीय जबान देखो;
दुनिया में सबसे प्यारी अपनी जबान देखो ।

बेजान जिस्म में भी, नव प्राण फूँक दे जो;
ऐसे तिलस्मवाली अपनी जबान देखो ।

प्राचीन आर्य भाषा अपनी जो संस्कृत है
वारिश उसी की हिन्दी कितनी महान देखो ।

भारत की सब जबाने इसकी सहोदरा हैं,
हिन्दी बड़ी बहन है लो इसकी शान देखो।

सम्पर्क का वतन में माध्यम जो बन रही है;
इतनी प्रभावशाली हिन्दी जबान देखो ।

रसखान और रहीमा अरबी व फारसी पढ़,
हिन्दी के गीत गाये पुख्ता प्रमाण देखो ।
हिन्दी हमारी धड़कन पहचान है हमारी;
सब मजहबों की प्यारी हिन्दी जबान देखो ।

हिन्दी हो राष्ट्र भाषा, बापू की थी ये आशा,
भारत की एकता का यह है प्रयाण देखो ।

ऐ देश-वासियों तुम, छोड़ो गुलामी-भाषा;
हिन्दी में है वतन का निज स्वाभिमान देखो ।

२५. पथिक पथ खाली नहीं है

पथिक पथ खाली नहीं है ।
भीड़ ही बस भीड़ है इस मार्ग में,
तीड़ ही बस तीड़ है इस मार्ग में,
भेड़-बकरी की तरह सब चल रहे हैं,
है अनिश्चित लक्ष्य उजियाली नहीं है ।
पथिक पथ खाली नहीं है ।
सब परस्पर झुंड में टकरा रहे,
चल रहे अनपेक्ष्य और घबरा रहे;
सोच की सरिता है सूखी हो चुकी
अब वहाँ जल एक भी प्याली नहीं है ।
पथिक पथ खाली नहीं है ।
यदि तुझे चलना उन्हीं की राह पर हैं,
भूल निज अस्तित्व उनकी चाह पर है,
तो न सीना तान, झुककर साथ होले,
तू भी पत्ता ही रहा, डाली नहीं है ।
पथिक पथ खाली नहीं है ।
और यदि चलना नहीं है साथ सुनले,
बन अमीरे कारवां, खुद राह चुनले;
झेल सीने पर जहाँ, जो भी पड़े आ,
है बहुत नजदीक साहिल, रात अब काली नहीं है ।
पथिक पथ खाली नहीं है ।
राह में यदि निविड़ तम हो, सघन वन गिरि कंदरायें,
आँधियाँ गम की उठी हों और घन काली घटायें,
आत्म-रश्मि के उजाले, ज्ञान का पथ तू बनाले,
अनुभवों का ले सहारा, बात डर वाली नहीं है ।
पथिक पथ खाली नहीं है ।

२६. भूकंप एक जलजला

यह कैसा प्रतिशोध धरा का
मनुज-बुद्धि की लाचारी;
कब्रस्तान बन गई बस्ती,
गली गली हरसू ख्वारी ।

सुनकर चीख पुकारें क्रन्दन
निष्ठुर मन भी पिघल गया;
बनी जनेता महाकाल खुद
खून, खून को निगल गया ।

तन-मन-धन लाचार हो गये,
फटी रह गई आँखें भी;
पक्षी गण तज नीड़ उड़ चले,
थकित रह गई पाँखें भी ।

क्या मनुष्य क्या प्राणीजन
इस तौर हताहत दीन हुए,
ज्ञान और विज्ञान के सारे,
आविष्कार विलीन हुए ।

आया जो भूचाल कुपित हो ।
किये प्रताड़ित नर-नारी;
दृश्य देख थी व्यथा व्यथित
खुद, हुई तबाही जो मारी

प्रजातंत्र छब्बीस जनवरी
का दिन महा अशुभ निकला;
किए अनाथ सहस्त्रों जिसने
और सहस्त्रों को निगला ।

सदी इक्कीसवीं भारत और
गुजरात को कर संकेत गई;
कुदरत की ताकत असीम है
पल भर में कर भस्म गई ।

यह प्रकोप है महाशक्ति का
गगनबिहारी मानव सुन,
खाकर अन्न धरा का उस पर
अत्याचार का जाल न बुन ।

करके खेत न खोखला उसका
हृदय कर दिया है तूने;
पर्यावरण प्रदूषित करके
जहर भर दिया है तूने ।

मैली गंगा माता, नदियों
का जल मैला कर डाला;
बिजली पानी जिनसे पाये
उनकी दुर्गति कर डाला ।

हरी-भरी परिपूर्ण जलावृत
शस्य-श्यामला थी धरती;
तूने किया वनस्पति छेदन
प्रकृति रही आहें भरती ।

रे मनुष्य ! तज सभी उपद्रव
कर माँ का अभिषेक पुनः
आवश्यकता से न अधिक
दोहन का कर अतिरेक पुनः ।

वर्ना ऐसे और जलजलों
से न तेरी रक्षा होगी;
धरती माँ की शक्ति प्रलय
सम, जन-जन की भक्षा होगी ।

२७. क्रांति के गुब्बारे

मैं मतवाला आज चला हूँ,
क्रान्ति लिए गुब्बारों में;
रोक सके इनकी उड़ान को
ताकत नहीं मीनारों में ।

देश प्रेम की गैस भरी है,
डोर बँधी आजादी की;
बलिदानों के रंग भरे हैं,
है उड़ान आबादी की;

बात कहूँ मैं खुल्लम-खुल्ला,
गलियों और चौबारो में;
इन्हें रोकने का दुस्साहस,
लाना नहीं विचारों में ।

बहुत सुना है अब तक हमने,
देश महान हमारा है
ये सब है इतिहास की बातें,
अब तो वह बेचारा है;

नहीं रहा विश्वास प्रजा को
भारत की सरकारों में;
अधनंगे भूखों का हिस्सा
चला गया दरबारों में ।

नहीं चलेंगे झूठे वादे,
है ऐलान जवानों का;
काम करो या कुर्सी छोड़ो,
मौका नहीं बहानों का

सभी समझते है हित अपना,
भ्रमित न होंगे नारों में;
फूल न होंगे अब माला से,
जूते होंगे हारों में ।

बेकारों की भीड़ लगी है,
फिक्र कहाँ नेताओं को;
जिनके घर में जले न चूल्हा
पूछो उन माताओं को;

सूख रहा भारत का यौवन,
अर्जी लिए कतारों में;
फूल खिलेंगे नौकरियों के
शायद नई बहारों में ।

आज विधायक और सांसद,
जन-सेवक कहलाते है;
जनता के पा बोट निकम्मे
सब स्वामी बन जाते हैं ।

बाँट रहे ये देश की दौलत,
पक्षों और सरकारों में;
काम नहीं कोई विकास का
घूम रहे हैं कारों में ।

देश हुआ आजाद मगर,
आबाद न अब तक हो पाया;
पेड़ लगाया जिस उम्मीद से
फल न अभी तक दे पाया ।

भ्रष्ट नीति के पाटों के बिच
पिसें गरीब हजारों में;
चली जा रही सब खुशहाली
कुछ ऊँची दीवारों में (महलों और मीनारों में)

२८. अभियान गीत

आओ चलो, आओ चलो चलो आओ रे;
मेरे बाल साथियो, आओ आओ रे !
नद-नदी प्रवाह तुम, प्रशस्त पुण्य राह तुम;
आज मन में भर उमंग गीत गाओ रे !
(बटुक बुलबुल वीरबाला, बालचर स्वमान बाला;
त्रिदल-कमल, तीन रंग ध्वज लहराओ रे !)
देशभक्त बन निडर, सत्यनिष्ठ अग्रसर,
बन पयोधि की तरंग बढ़ते जाओ रे !
वीर-भू के लाल हो दुश्मनों का काल हो;
दूषणों से लड़के जंग तुम दिखाओ रे !
कर्मनिष्ठ बन महान, धर्मनिष्ठ गुणवान;
तुम बलिष्ठ अंग-अंग को बनाओ रे !
पढ़े चलो, बढ़े चलो विजय-शिखर चढे चलो;
हो भले ही राह तंग रुक न जाओ रे !
विनयशील वफादार, मितव्ययी, ईमानदार;
मन बचन व कर्म में उच्छंग लाओ रे !
प्राणीमात्र से हो प्यार, हो न कहीं तिरस्कार,
मातृभाव हर प्रसंग में जगाओ रे !

२९. बदरिया उठी (गीत)

शेर : आकाश में घिरी हैं काली भंवर घटाएँ,
हैं बह रही जमीं पर मदहोश ये हवाएँ,
सारी फ़िज़ा का मौसम, हमसे ये कह रहा है
बतला दे आज तेरी खोई कहाँ निगाहें ।

गीत : सजन अब तो आओ बदरिया उठी ।
मिलन को है तरसी नजरिया उठी ।
अँगना में लाई है बदली फुहारें,
बगिया में सावन की आई बहारें;
गरजती घटाएँ है मुझको डराती,
मेरे दिल में घड़कन संवरिया उठी ।

सुहाना ये मौसम हे अरमां जगाये,
कब से गये आप अब भी न आये;
बहे आँसुओं की नदी इस कहर से
डुबो दे न हमको भंवरिया उठी ।

ओ बदरा उन्हें जाके संदेश कहना,
बिना उनके हमको न जीवित है रहना;
जो आये न आज हूँ वो इस हाल में भी
तो समझें हमारी उमरिया उठी ।

३०. धरा की करवट

आज धरा ने करवट बदली,
मौसम ने ली अँगडाई;
चली वसंती हवा पवन में
सुरभि अनोखी भर लाई ।
वन-उपवन खिल उठे
कोपलें निकलीं, कलियाँ मुस्काई,
कुहू कुहू कोयल की सुनकर
झूम उठी है अमराई ।
नाच रही हैं तितली परियाँ
बजे भ्रमर की शहनाई;
उतरा लो ऋतुराज धरा पर
अलसी कलसी भर लाई ।
बिखरा रंग बसंती खेतों
में हैं सरसों लहराई;
गुँजे ढोल-ढफ गलियों-गलियों
फाग-राग की ध्वनि छाई ।
चलो साथियों, मन की वीणा
में छेडो लय मन भाई;
भरो दिलों में नई उमंगें,
छोड़ पुरानी निठुराई ।

३१. सुघड़ सुहानी रात

सुघड़ सलोनी रात मनोहर
तारों की बारात लिए;
कहाँ विचरने चली यामिनी
सारे गजरे साथ लिए ?
झींगुर की आवाज मधुर,
झांझर जैसी झनकार लिए
पीउ पीउ की रटन लगाते
पपीहे सा फनकार लिए;
चातक की उस विरह वेदना,
का संग में प्रतिघात लिए ।
वंशी-ध्वनि सी आज पवन में
बड़ी अनोखी सिहरन है,
ताल दे रहे तरु पल्लव में
कत्थक जैसा नर्तन है;
कहाँ चली जा रही राग -
रागिनियों की सौगात लिए ?
निकट सही गन्तव्य तुम्हारा
पर थोड़ा विश्राम करो;
अभी अभी सोई है प्रकृति
तुम भी तो आराम करो;
देखो शशि आया है तुमसे
कहने कोई बात लिए ।
मन में मेरे मिलन के उत्कट
भावों का लहराव सही;
सुर्ख अधखुले नयनों का
सपनों में खोया भाव सही;
भोर भये आये तब प्रीतम
नई किरन परभात लिए ।

३२. ऋतुओं की रानी, वर्षा

मेघ नभ छाय रहे, मोर गन गाय रहे;
टर्र-टर्र मेंढकन रटना लगाई है ।
गरजत हैं घन घोर पवन करे है शोर;
रिमझिम बादलों ने झड़ी-सी लगाई है ।
बीथीं उभराय चलीं, धूरि को दबाय चलीं;
वर्षा ने गंदगी ले दूर जा बहाई है ।
नद-नदी सजीव भये, तरु-तृण पात नये,
स्वागत में भूमि हरी-जाजम बिछाई है ।
पपीहे की प्यास बुझी, कृषक को आस बँधी,
खेतन में नई हरी फसल लहराई है ।
सूर्य-चन्द्र लुप्त होत बादलों से ओत-प्रोत;
घटा-घिरे निशि-दिन पड़े न दिखाई है ।
भूमि तृण आच्छादित, सर-पोखर जल प्लावित,
वृक्ष संग वल्लरी भी अंग लपटाई है ।
घोर, घन गरजन से चपला की चमकन से,
विरही मन प्रीतम की, पीर उभर आई है ।
सखियाँ मिलि सावन में झूल रही बागन में;
राग मल्हार चहुँ ओर दे सुनाई है ।
सचराचर हर्षित है धरा धान्य गर्भित है,
ऋतुओं की रानी प्यारी पावस जो आई है ।

३३. जन्मदाता का प्यार

करूँ मातु-पितु शुक्रियादा तुम्हारा,
बड़े हेत से कीन्हा पालन हमारा ।
है दुनिया की दौलत से ममता ये न्यारी,
मेरी हर खुशी में है मेहनत तुम्हारी ।
सहे कष्ट खुद और मुझे सुख है दिया
मेरी हर जरुरत को पूरा है किया ।
कभी जब था रोता उठा माँ थी लेती,
मुझे चूम कर अश्रु भी पोंछ देती ।
सही धूप खुद, मुझको आँचल उढ़ाया;
भला माँ से क्यों कर उऋण हो ये काया ।
स्वयं गीले बिस्तर पै, थी सो वो जाती;
मगर मुझको सूखे पै, हरदम सुलाती ।
पिता-माता का जग में सानी न कोई;
दिया जन्म उनसा न दानी है कोई ।
मेरा रूठना और मचलना भी हरदम ।
सदा हँस के टाला, बिगड़ना भी हरदम ।
है दुनिया में देखे अनेको बजार;
न बिकता मिला, जन्म दाता का प्यार ।
बड़े ही अभागे हैं, वो नर और नारी;

जो माता-पिता को बना दें भिखारी ।
है कदमों में उनके बसें तीर्थ सारे;
करो इनकी सेवा बिना कुछ विचारे ।

३४. मधुमास की चुभन

उनमुक्त गगन, मदमस्त पवन,
फिर क्यों न बहक जाये तन मन;
उँची उड़ान, पंछी समान,
भरने को व्याकुल है जन जन ।
आई बहार करके सिंगार,
कुदरत की हर शय में निखार;
खिलती कलियाँ, महकी गलियाँ
दे रही निमंत्रण है बन ठन ।
है धरा बनी फिर नवल वधू
परिधान जीर्ण सब गया बदल;
कोमल किसलय अरुणाभ हरित,
खिल उठे कुसुम देखो वन वन ।
है रूप नया, परिरूप नया,
श्रंगार नया, अभिसार नया;
हर साज नया, ऋतुराज नया
तितली का नृत्य, भ्रमर-गुंजन ।
कोयल कुहू-कुहू, पपीहा पीहुका,
वन में कर मोर रहे टहुका;
आयो अनंग, शर भर निषंग
मधुमास जगाये मन में चुभन ।
आँखों में नशा, साँसों में नशा,
मदहोश बनी हर एक दिशा;
सहलाये तन जब प्रातः पवन
मन चाहे प्रिय से मधुर मिलन ।

३५. क्या पहचान तुम्हें दूँ रानी ?

क्या पहचान तुम्हें दू रानी ?
मैं अनभिज्ञ अधूरा पन हूँ,
अलखित अकथ कहानी ।

ये जग, मैं का दास बन गया,
तोड़ रहा है हम से नाता;
ओढ़ ढाल का कवच मैं स्वयं
हम पर तड़ित बार करवाता
मैं और हम दो नदी किनारे,
बीच भंवर है, नाव पुरानी ।

आयु अल्प है बारि-बताशा,
जिससे मनकी बुझे न प्यासा,
फिरुँ भटकता जन जंगल में,
कोई नहीं बंधाये आशा;
फिर भी मन में एक तमन्ना,
कुछ कर जाऊँ बने कहानी ।

जीवन धन है क्षणिक खिलौना,
इसका कैसे करुँ भरोसा;
तन निर्बल है क्षितिज बिछौना,
मन को क्योंकर हो संतोषा;
प्रीति अमर है भेंट अनोखी,
यह स्वीकार करो कल्याणी ।

३६. युग प्रहरी 'सरदार'

इस दुनिया ने कम्प्युटर से
लौह-पुरुष उत्पन्न किया;
युग पहले भारत माता ने
लौह-पुरुष को जन्म दिया ।

खेड़ा जिला, ग्राम करमसद
भारत के गुजरात प्रान्त में;
सन अठारह सौ उन्यासी
अक्टूबर के मास अंत में ।

जन्म लिया था जिस सपूत ने
बना देश का वह सरदार;
कृषक आन्दोलन से जिसके
झुकी फिरंगी की सरकार ।

नाम था वल्लभभाई लेकिन
लौह पुरुष कहलाया था
भारत वल्लभ बना, सार्थक
नाम ये कर दिखलाया था ।

गाँधीजी के साथ हमेशा,
उनका ये सहयोगी था;
हरदम तत्पर जटिल कार्य में
आजादी का योगी था ।

वह भारत का लाल बड़ा ही
वीर और था नीति कुशल;
केन्द्रीकरण किया रजवाडों
का ऐसा था उसमें बल ।

आज देश का जन-जन तुमको
युग-प्रहरी कर याद रहा;
दिया न फिर क्यों तुझ-सा नेता
प्रभु से कर फरियाद रहा ।

डोल रही भारत की नैया
नाविक कुशल न है कोई;
बने देश समृद्ध सुरक्षित
रहवर कुशल न है कोई ।

लूट रहे नेता जनता को
रक्षक भक्षक बन बैठे;
चुन कर जिन्हें बनाया सांसद
वो ही तक्षक बन बैठे ।

कोई नहीं आज भारत में
जिसका हम अनुसरण करें;
फिर जन्में सरदार कोई तो
प्रेरित हो अनुकरण करें ।

३७. सत्यमेव जयते

सत्यमेव जयते, सत्यमेव जयते;
आज नहीं सदियों से अपने
ऋषि-मुनि हैं कहते ।
सत्यमेव जयते ।

साथ न छोड़ो कभी सत्य का, मार्ग भले कठिन हो;
अडिग रहो कथनी करनी में, सन्मुख प्रखर अगिनि हो;
होती जीत उन्हीं की जो संकट में दृढ रहते ।
सत्यमेव जयते, सत्यमेव जयते ।

हे माता के बीर सपूतो, नवयुवती युवानो ।
भारत-भावी अंधकारमय, है समझो और जानो;
जागे नहीं समय से तो फिर यह न बने कहते ।
सत्यमेव जयते, सत्यमेव जयते ।

शासन की लो बागडोर, निज हाथों में दीवानों;
बनो देश के भाग्यविधाता, शूरवीर बलवानों;
कब तक बन अनजान रहोगे लाखों दुःख सहते ।
सत्यमेव जयते, सत्यमेव जयते ।

वर्ष पचास गये राजा तज सिंहासन देते थे;
राज्य सौंप उपने पुत्रों को वानप्रस्थ लेते थे;
सठियाए अब तो कुर्सी से हैं चिपके रहते ।
सत्यमेव जयते, सत्यमेव जयते ।

वृद्ध-शिथिल कमजोर नायकों से क्या देश चलेगा ?
इच्छा-शक्ति मर गई वह क्या अहिगन फन कुचलेगा ।
वतन न उन्नत हो सिंहासन पर इनके रहते ।
सत्यमेव जयते, सत्यमेव जयते ।

भीतर-बाहर आज दुश्मनों का भारी जमघट है;
राणा और शिवा के वंशज मार करो-चौपट है;
मत बढ़ने दो गद्दारों को तन में बल रहते ।
सत्यमेव जयते, सत्यमेव जयते ।

बन अर्जुन गांडीव उठाओ, दुर्योधन को मारो;
शकुनी और दुस्सासन जैसे, दुष्टों को संहारो;
परामर्श गीता में है, यह योगेश्वर कहते ।
सत्यमेव जयते, सत्यमेव जयते ।

शिक्षा-दीक्षा यहाँ प्राप्त कर, जो परदेश गये हैं;
दुखिया निज माँ छोड़ अपर की माँ के पुत्र भये हैं;
भारत माँ बाहें फैलाये, बैठी यह कहते ।
सत्यमेव जयते, सत्यमेव जयते ।

आओ प्यारे देश वासियों, भारत में स्वागत है;
आर्यभूमि गौरवान्वित होगी, तुमसे अभ्यागत है;
हो समृद्ध यह शस्य-श्यामला, स्वाभिमान रहते ।
सत्यमेव जयते, सत्यमेव जयते ।

करो अदाऋण मातृभूमि का, इसको खूब सजाओ;
जननी जन्मभूमि भारत को, स्वर्ग समान बनाओ;
रहो न अब निर्द्वन्द, समय की धारा में बहते ।
सत्यमेव जयते, सत्यमेव जयते ।

३८. स्वतंत्र जीवन के प्रेरक

ये पक्षी निस्सीम गगन के,
हैं प्रेरक स्वतंत्र जीवन के;
रहें भटकते वन वन निर्जन
साधक उपवन के ।

तरु टहनी पर झूला झूलें,
सांध्य-पवन से सुनते लोरी;
शयन वृक्ष के घन कुंजों में
भोजन तृण-फल और निमौरी;

नहीं कामनाओं की गठरी,
भार-रहित मन के ।

अरुणोदय से पहले उठकर,
प्रातः अनिल में भरें तराना;
कहते ग्रामवासियों जागो
सुन खगवृंदों का कल गाना;

गई तिमिरि की काल-रात्रि अब
साज सजो रण के ।

ये खाते उतना ही लेते
बाकी छोड़ और को देते;
कल की चिन्ता इन्हें न कोई
मालिक खुद इनकी सुध लेते;

धन-दौलत की भूख न इनको
मौला हरफन के ।

हम सबसे है इनका कहना
क्यों पहनी माया की बेडी ?
रहे लड़खड़ा पैर तुम्हारे,
चाल हो गई टेढ़ी-मेढ़ी

भार-रहित होकर दिन जीओ,
लौटा बचपन के ।

३९. जवानी की उलझन

लो उलझन बन गई जवानी ।
छूट गया बचपन का संबल
साथ न कोई रही निशानी ।
आया था लेकर आशाएँ,
खुलें प्रगति की नई दिशाएँ;
जीवन-पथ आलोकित होकर
हटें तिमिर की सब बाधाएँ;
बना कूप-मंडूक अभागा
छोड़ सका न बंध्या पानी ।
इस जग का दस्तूर है देखा
केवल मैं का पल्ला भारी;
हम-तुम और अपनी हरजा ही
प्रगट हो रही है लाचारी;
है ममत्व केवल खुद ही से
कौन गैर की सुने कहानी ।
गड़ा गर्त में रहा आज तक
क्योंकि नहीं बन पाया प्यादा;
अंतरमन झकझोर कह रहा,
बदले क्यों तू आज इरादा;
है अँधियारी रैन आज भर
कल फिर होगी सुबह सुहानी ।
उठ निज पथ आलोकित कर ले,
दृढ़ निश्चय से हाथ मिला ले;
स्वार्थी-जग से तोड़ वास्ता,
मन मंदिर में दीप जलाले;
मंजिल उसे सदा है मिलती
जिसके मन हो सूझ सयानी ।

४०. पर मैं किससे खेलूँ होली ? (गीत)

सखि, लाग्यो महिना फागुन को,
पर मैं किससे खेलूँ होली ।
व्यर्थ गई मन की पिचकारी,
अरमानों के रंग न भाये;
बीते कितने दिनवां रतियाँ
अब हूँ लौट सजन न आये;
हे रामा कैसी बन आई
भूल गया मुझको हमजोली ।
पवन बसंती गलियन-गलियन,
मस्ती लेकर घूम रहा है;
रवि अपनी कोमल किरणों से
होंठ धरा के चूम रहा है;
खिली अधखिली कलियों के संग
अलिगन लागे करन ठिठोली ।
चुभे शूल सम आज हृदय में
ढफ़ ढोलों की ताल सुहानी;
फगुआ राग न मन को भाये
है विरहन बेहाल जवानी;
अंतर मन जन शून्य बना है
कड़वी लगे कोयल की बोली ।
बौराये अमवा बगियन में;
गदराये यौवन अंगियन में;
भरे छलाँगें प्रतिपल मनवा,
शरमाये गोरी गलियन में;
लिए मुखौटे रंग-बिरंगे,
आई है होली की टोली ।

४१. यदि यह देश बचाना है

भारत माँ के वीर सिपाही
हिन्दु-मुस्लिम, सिक्ख-ईसाई;
आओ मिलकर एक बने हम
बौद्ध-पारसी, जिन अनुयायी;
सारे भेद भुला आपस के
संकट दूर हटाना है ।
यदि यह देश बचाना है ।
बीथीं, व्यथित, शून्य चौराहे,
खेत छोड़ बैठे हरवाहे;
सिसक रही हैं केसर क्यारी
यहाँ रक्त से धरा नहाये;
इन कश्मीरी बागानों से
यह सिलसिला मिटाना है ।
यदि यह देश बचाना है ।
स्वर्ग आर्यावर्त का जो है,
आज नर्क कर डाला वो है;
पाक करे नापाक हरकतें
मानवता का दानव वो है;
जेहादी बनाम दरिन्दों
को अब सबक सिखाना है ।
यदि यह देश बचाना है ।
आज बने नेता अभिनेता,
आर पार की करें लड़ाई;
भाषण में ऊँची गुलबांगे,
करनी उनकी ना मर्दाई;
वृद्ध-शिथिल नेतागीरी से
बृहंनला बन जाता है ।
यदि यह देश बचाना है ।

ठंडा खून जीर्ण हो काया,
वो किसकी रक्षाकर पाया;
सूनी माँ की गोद हो रही,
युवतियों की माँग सफाया;

मरें रोज सैनिक और जनता,
कब तक सहते जाना है ।
यदि यह देश बचाना है ।

उठो देश के वीर सपूतों,
नौजवान सब हो रजपूतो;
तोड़ पुरानी जंजीरों को,
दुश्मन दो खदेड़ यमदूतो;

बनो विक्रमादित्य जवानो
माँ का कर्ज चुकाना है ।
यदि यह देश बचाना है ।

भारत जन-जन आज चाहता,
एक बार हो जाय किनारा;
धूल चटा दें हम शत्रु को,
साहस फिर न करे दुबारा;

सठे साठ्यम समाचरेत ही
अपनी नीति बनाना है ।
यदि यह देश बचाना है ।

देश हमारा हमें चलाने
और बनाने का अधिकार;
क्या हम औरों के बलबूते
चला सकेंगे निज घरबार;

अपनी रक्षा हेतु स्वयं ही
पहन कवच भिड़ जाना है ।
यदि यह देश बचाना है ।

मन पक्का तो तन भी पक्का,
मन के हारे से ही हार;
आर्य-भूमि है वीर प्रसूता,
क्यों हम सहें गैर की मार;

न्याय-नीति है साथ हमारे
अरि को प्राण गंवाना है ।
यदि यह देश बचाना है ।

४२. चिड़िया का शोक

दूर ऊँची टहनी पर
बैठी हुई चिड़िया,
घुमा रही थी नज़र
दाने की तलाश में ।
क्या पता, आज
कब तक पड़ेगा
भटकना और
उड़ना
ऊँचे आकाश में ?
एकाएक,
नज़र पड़ी उसकी
काँव-काँव करते
कुछ कौवों पर ।
उसने सोचा,
शायद, जमीन पर
बिखरे हुए दानों
के लिए
झगड़ रहे हैं वो ।
उड़कर, वह भी
वहाँ पहुँच गई
क्षुधापूर्ति की
उम्मीद लिए हुए ।
उसने देखा,
एक निःसहाय मेंढक को
नोंच रहे थे
वे सब ।
वह बोली,
"अरे निर्दयियो !
क्यों तुले हुए हो
उसकी जान लेने पर;

तनिक भी शर्म नहीं
आती ?
कुछ तो दया रखो ।''
वे काँव-काँव
करते हुए बोले,
''कैसे छोड़ दें इसे ?
यह तो हमारा
शिकार है ।
दया से
पेट नहीं भरता ।''
मेंढक खून से लथपथ
कर रहा था
कोशिश
जान बचाने की ।
मगर व्यर्थ ।
देखते ही देखते
नोंचकर
खा गये उसे
वे सब ।
चिड़िया ने कहा,
''दुष्टों के सामने
दया भी
निःसहाय
मेंढक की मानिन्द
लाचार है ।''
उस दिन
चिड़िया रानी
मेंढक के शोक में
भूल गई
खुद की
भूख और प्यास ।

४३. मैं तुम्हारी बाँसुरी हूँ (गीत)

मैं तुम्हारी बाँसुरी हूँ,
तुम मेरी सरगम,
छेड़ दो फिर आज कोई
राग अति मधुरम् ।
साँस की इस बाँसुरी को
फूँक दो साथी;
देखिये फिर किस तरह हो,
ध्वनित दिन राती;
आपका स्पर्श पावन
जब ये पायेगी;
कंठ से मुखरित बनेगा
सुप्त-स्वर पंचम् ।
थिरकती, तब अंगुलियाँ
जब साज छेड़ेंगी
चाँदनी रातें स्वयं
मधुरस उंडेलेंगी;
राग-रागिनियाँ बहेंगी
बन के सरितायें;
गीत और संगीत का
हो जायेगा संगम ।
सुप्त-स्वर अंतस्थ मन में,
रस जगायेगा;
प्राण में सत्यं शिवम्
निर्झर बहायेगा;
अहम् के पत्थर पिघल
आँखों से टपकेंगे;
दूरिया मिटकर मिलन का
आयेगा मौसम ।

४४. छब्बीस जनवरी (गणतंत्र-दिवस)

छब्बीस जनवरी है गणतंत्र दिन हमारा
आओ सभी मनाएँ, उत्सव ये प्यारा प्यारा ।
इस दिन से देश अपना गणतंत्र है कहाया,
सदियों का मान खोया, हमने है फिर से पाया;
लहराओ शान से अब अपना तिरंगा प्यारा;
छब्बीस जनवरी है, गणतंत्र-दिन हमारा ।

आपस की फूट से हम परतंत्र हो गये थे,
निज आन-मान खोकर, निष्प्राण सो गये थे;

रावी नदी के तट पर, जागा स्वराज्य नारा;
छब्बीस जनवरी है, गणतंत्र-दिन हमारा

ऐ देश-वासियों अब, वह भूल फिर न करना,
मजहब व कौम को ले, आपस में फिर न लड़ना;

यह भूमि हम सभी की, यह देश है हमारा ।
छब्बीस जनवरी है, गणतंत्र दिन हमारा ।

हो ऐक्य हम में ऐसा, हम भारतीय कहलायें,
कर दूर मन की दूरी, मन मेल को बढ़ाये;

हो तंत्र चाहे जितने, गण एक हो हमारा ।
छब्बीस जनवरी है, गणतंत्र-दिन हमारा ।

४५. भाव निर्झर

रोकिये मत भाव मन के
मुक्त बहने दीजिए;
ज्ञान को नौका बनाकर
पार भव को कीजिए ।

मन में कुंठाएँ समेटे
तू न जीने पायेगा;
भाव-निर्झर से नदी की
धार प्लावित कीजिए ।

भाव गंगाजल जल हैं,
ये तो तुल्य अमृत बिन्दु हैं;
हृदय सागर से जो निकले
वो मनोरम इन्दु हैं;

ज्ञान की है रोशनी ये
और शीतलता प्रद;
इसमें जो भी है नहाये
वो बने खुद सिन्धु हैं

शुद्ध भावों से जगत की
झोलियाँ भर दीजिए ।

ज्योति से ज्यों ज्योति जल
दीपावली बन जाये है;
फूल यदि एक-एक पिरोयें
हार बनता जाये है ।

सुप्त हृदयों को जगाकर
हम उन्हें जीना सिखायें;
लगनयदि सच्ची हो तो
हर काम होता जाये है

जो भी रीते घट है उनको
प्रेम-पूरित कीजिए ।

४६. जागो ग्राम वासियो

सुनो भाइयों सुनो आज तक समझ कभी है आया ।
इस आपस के बैर भाव से, क्या खोया क्या पाया ?

पति-पत्नी आपस में लड़ते, मात-पिता से पुत्र झगड़ते;
सास-बहू और ननद के टंटे, भाई से भाई हैं भिड़ते;
घर-घर फूटन देख परस्पर, मन मेरा भर आया ।

जाति-पाँति के झगड़े देखे, मुल्ला-पंडित लड़ते देखे;
नहीं किसी को पड़ी देश की, बनते काम बिगड़ते देखे;
पिछड़ गये सब गाँव देश में, वैमनस्य है छाया ।

शंका और कुशंकाओं में अब तक रहे हैं जीते;
दु:ख उठाते रहे हमेशा, गम के आँसू पीते;
नहीं किया विश्वास किसी का, और न प्रेम बढ़ाया ।

कहाँ गई चौपाल पुरानी, जन-जीवन के हिस्से;
जहाँ बैठ हम सब सुनते थे, ज्ञान कथाएँ किस्से;
भूल गये हम प्यारी बैठक, मन में द्वेष समाया ।

जब से चला इलेक्शन इसने फूट दिलों में ड़ाली;
बँटने लगे गाँव पक्षों में, पार्टी नई बनाली;
हममें विघटन पैदा करने, है चुनाव यह आया ।

पहले आपस के झगड़े, मिलकर बुजुर्ग निपटाते;
रह निष्पक्ष प्रेम से दोनों, पक्षों को समझाते;
कहाँ गये वे पंच गाँव के, जिनका न्याय सवाया ।

रोज पुलिस-प्यादों के चक्कर मे छीनी आजादी;
कोर्ट-कचहरी, मुकद्दमों से, है आई बरबारी,
आपस में सहकार करो तो, सुखी बने हर काया ।

ये भारत के नेता हमको बचनों में भरमाते;
झूठे वादे कर चुनाव में, चाँद हमें दिखलाते;
कभी न उन्नत हो गाँवों की, ऐसा जाल बिछाया ।

व्यापारी-नेता-अधिकारी, इनकी मिली भगत है;
शोषण करते ये कृषकों का, पीड़ित ग्राम जगत है;
सस्ती उपज, खाद-बिजली-डीजल का भाव बढ़ाया ।

वर्षों से कागज पर हैं ये, सारे प्लान बनाते;
ग्राम-सड़क, बिजली, पानी का, बजट है चट कर जाते;
पोल खोल दे मक्कारों की, राज बताने आया ।

क्यों इनकी बातों में आ, इन पर निर्भर रहते हो;
तुम्हें आत्म विश्वास नहीं है, कष्ट स्वयं सहते हो;
अब भी जागो ग्राम-वासियो, श्याम जगाने आया ।

४७. रात आई, खिला चाँद मुन्ने (लोरी)

सोना सोजा, मेरे प्यारे मुन्ने !
रात आई, खिला चाँद मुन्ने ।

देख पंछी विचर आ गये हैं
गायें-गोपाल घर आ गये हैं;

छा अँधेरा गया प्यारे मुन्ने ।
रात आई, खिला चाँद मुन्ने ।

थपकियाँ देके तुझको सुलाऊँ ,
गीत गा-गा के निंदिया बुलाऊँ ;

देखो सपने मधुर प्यारे मुन्ने ।
रात आई, खिला चाँद मुन्ने ।

स्वप्न में चाँद के घर तू जाना,
खेल तारों के संग में रचाना;

तू बढे चाँद-सा प्यारे मुन्ने ।
रात आई, खिला चाँद मुन्ने ।

देख माँ को कभी न सताना,
अपने पापा का दिल न दुखाना;

देंगे आशीष तुम्हें प्यारे मुन्ने ।
रात आई, खिला चाँद मुन्ने ।

४८. टिमटिमाती शमा

मुश्किलों के थपेड़े भी खाकर,
गीत गाता हुआ मैं चला हूँ ;
डूब जाये न मेरी ये नैया
खुद को बल्ली बनाता चला हूँ ।
धूप और छाँव मैंने है देखी,
कालिमा और उजाली भी देखी;
पल में रोये कभी मुस्कराये
बालपन और जवानी भी देखी ।
मेरे जलने से हो राह रोशन,
खुद को यों कर जलाता चला हूँ ।
मैंने गैरों को अपना बनाया,
किन्तु अपनों ने समझा बेगाना;
वो न अब तक मुझे जान पाये,
मेरी किस्मत का है ये फसाना;
टूट जायें न नाजुक ये बंधन
रुढ़ियों को निभाता चला हूँ ।
ये सफर जिन्दगी का अनोखा,
दूर मंजिल है कितनी न जाने;
जीत या हार कुछ भी है मुम्किन;
आप माने यकीं या न माने;
चलते-चलते हुई शाम हमको
चाँद तुमको दिखाता चला हूँ ।
क्या है मजहब न अब तक मैं समझा;
फर्ज को ही है ईमान माना;
देख दुनिया में नफ़रत की आँधी,
भूल बैठा हूँ खुद का ठिकाना;
राह, भटके हुओं को मिले फिर,
इसलिये टिमटिमाता चला हूँ ।

४९. कब तक देखूँ राह तुम्हारी (गीत)

कब तक देखूँ राह तुम्हारी ?
अंबर छाई घटा निराली,
दिन में हो आई निशि काली;
पी की प्रेम बूँद हित पपीहा
पीयु-पीयु करि रैन गुजारी ।
कब तक देखूँ राह तुम्हारी ?
सूर्य अस्त को जा पहुँचा है;
तिमिरि निशा का आ पहुँचा है;
ज्योति पूर्ण किरणों से अपनी
चन्द्रोदय ने करी उजारी ।
कब तक देखूँ राह तुम्हारी ?
कोयल जब-जब गीत सुनाए
मन में मेरे हूक उठाए;
अब वे बीती बातें उनकी
दिल पर करती चोट करारी ।
कब तक देखूँ राह तुम्हारी ?
गरज-तरज घनघोर घटाएँ,
बिजली छिपा अंक में लाएँ;
वसुधा ने भी देखो अब तो
हरित-पटल की पहनी सारी ।
कब तक देखूँ राह तुम्हारी ?
रात-दिवस ये आँख हमारी,
बाट देखती रहें तुम्हारी;
स्वप्नों की चादर को ओढे
बिता रही हूँ रातें सारी ।
कब तक देखूँ राह तुम्हारी ।

५०. गोपियों का उपालंभ

है अथाह सागर सम जीवन,
भरी न अब तक मन की गागर;
खारे जल से प्यास बुझे ना,
अमृत-बिन्दु खोजे निशि-वासर ।
यादें उनकी पीर बनीं हैं,
शब्द-शब्द जख्मों के चीन्हा,
बातें बनी हृदय की धड़कन,
आ उपचार न अब तक कीन्हा;
बाट देखते उम्र हो गई,
आये न गोकुल नट नागर ।
ऊधो हाथ संदेशा भेजा,
ब्रह्मज्ञान की बाँध गठरिया;
हम तो सगुण उपासक उनके,
निराकार की नहीं खबरिया,
देखा, सुना कभी नहीं जिसको,
कैसे दें उसको हम आदर ।
हम चकोर की रीति निभायें,
कृष्ण-चंद्र के हैं दीवाने ;
युग-युग तक रह जायें पियासे,
किन्तु द्वैत की बात न माने;
निर्गुण-सूर्य तपाये मन को,
चन्द्र-चाँदनी शीतल-चादर ।
रोम-रोम में कान्ह बसे हैं,
मनमोहन की लगी लगनियाँ;
साँस-साँस में रटन उन्हीं की,
मुरलीधर की बनी जुगनियाँ;
ऊधो कहो, तृप्ति हो कैसे ?
'श्याम' बसे मथुरा में जाकर ।

५१. हरि जन बन के

सीख ले जीना हरि जन बन के ।
हरि ही साथी जनजीवन के ।
सौंप दे उसको अपनी थाती,
जी निर्धन बन के ।

अश्रु पोंछ ले दीन-दुखी का,
है ये सच्चा धर्म सुखी का;
तन-मन-धन अर्पण हो जन हित,
बन जाये आदर्श सभी का;

प्राणी श्रेष्ठ, बनोगे तब तुम
प्यारे जन-जन के ।

उत्तम बुद्धि, देह भी उत्तम,
कंचन जैसी काया;
किन्तु, स्वार्थ नदिया में बहकर
माया में लिपटाया ;

जाने पर कुछ हाथ लगे ना
खाली तड़पन के ।

धन की बेड़ी फंदा भारी,
अपनापन ही है लाचारी;
मीत सिर्फ तेरी शुभ करनी,
जिससे तू ने करी न यारी;

काया-माया में भरमाकर
जीया अहि बन के ।

भज ले ईश नाम मन भावन,
छूटे तेरी आवन-जावन;
साश्वत सत्य हाथ लग जाये,
पी ले ज्ञानामृत पय पावन;

भव-बंधन से मुक्ति मिलेगी
छोड़ भरम मन के ।

५२. अछांदस-छांदस कविता - अछांदस

बंध सब टूट गये, छंद निर्बंध भये
आज कविता कामिनी में गद्य-लय समाई है ।

छोरि अलंकार-भूषण धरि दिये एक ओर
जैसे नवल-वधू कोई वस्त्र त्याग आई है ।

प्रास नहीं, गति नहीं, गीत की सुरति नहीं;
ऐसे काव्य-कारन की भीड़ बढ़ आई है ।

गद्य को कहे हैं कविता, छींट न कवित्त की,
क्यों न सीधी बात इन गद्य में बताई है ॥

छंद चातुर्य नहीं, ज्ञेयता माधुर्य नहीं
राग-रागिनी की नहीं, छाँव छू भी पाई है ।

साज-श्रंगार नहीं, भाव रस-धार नहीं
लुटे से सुहाग की, ज्यों विधवा लुगाई है ।

काव्य-रस भंग भये काम ज्यों अनंग नये
रूप-रंग अंग गये, गोरी मुरझाई है ।

सूर-मीरा-तुलसी की, अमर काव्य कृतियाँ भी
इन अछंद कविताओं के, सिल्प से लजाई है ।

छांदस

छंद-बद्ध कविता है रसगुल्ला जैसी प्यारी
भोजन की थारी में लड्डू रस-मलाई है ।

प्रीतम की पाती-सी गोरी गुन-गुनाती सी
मन को गुदगुदाती सी प्रेम की सगाई है ।

ग्राम्य लोक-गीत में है, शास्त्रीय संगीत में है;
प्रेमियों की प्रीत में भी गीत बन के छाई है ।

रंग-रस धार सी है प्रेम-पतवार सी है,
शोक संतप्त को, ये शीत पुरवाई है ।

वेद की ऋचाओं में है शास्त्र की विधाओं में है
व्यास-वाल्मीकि काली दास कर रचाई है ।

भक्तों की भावना से संतों की प्रार्थना से;
ऋषियों की साधना से ज्ञान लेके आई है ।

गंगा के नीर-सी सतसैया के तीर-सी
मीरा की पीर-सी हृदय में समाई है ।

गीता के ज्ञान-सी रहीम रसखान-सी
कवि की पहचान-सी सुछंद कविताई है ।

५३. बेटी की पीड़ा

सावन में सुधियों की
देहरी के आसपास
सोच रही बेटी बैठी
मन में उदास है ।
बचपन की यादों के
झूले पै झूल रही
रिक्त भयो स्नेह-निर्झर
बढ़ रही प्यास है ।
रुठे है महेमान
मेजवान क्या करें
नयनों की कोर नम
बाबुल की आस है ।
नीति-रीति भीति टाँग
लटके खजूर लोग
लोलुपता लालच में
टूटा विश्वास है ॥
जम हैं जमाई राज
सूर्पणखा है ननदी
भस्मासुर ससुरा भये
ताड़का सी सास है ।
नारियाँ जलाई जाती
नारियों के हाथ यहाँ
भारत में बहुओं पै
अति भारी त्रास है ।

पार्वती-लक्ष्मी और
दुर्गा-सी पूज्य रहीं
आज वही जिन्दगी से
अपनी निराश है ।
उनको विधाता बाम
बेटी घर जिनके
कोई पुत्र बाला उन्हें
डालता न घास है ।
मातु-पितु सीख देत
बेटी लाज राखियो
धरती-सी धीर धरि
रामजी की आस है ।
क्षमता से ज्यादा हैं
दहेज देत कन्या संग
वर पक्ष वालों की
बुझती न प्यास है ॥
जटिल समस्या है ये
सोचो देश-वासियों
बहू और बेटियों में
अन्तर कौन खास है;
बेटी अमानत पराये
घर की है किन्तु
बहू को बनाये बेटी
सुख चहुँ पास है ।

५४. याद क्यों न आई है

दीन और दुखियन की टेर सुन लीजिए
दीनानाथ देर कैसी तुमने लगाई है ।

द्वापर में अर्जुन के सामने ये प्रण कियो
भक्तन से आपकी अटूट-सी सगाई है ।

लागे है कलि काल आपहू पे हावी भयो
आन बान छोड़ि कैसी टेक बिसराई है ।

नीति-रीति पालि के, स्वधर्म पै चले हैं जो
राह में उन्हीं के आये हर कठिनाई है ।

झूठ-छल, कपट-दंभ का जो करैं व्यौपार
दोऊ हाथ आये उनके लड्डू और मलाई है ।

कंश अवतंश आज राज करैं चहुँ ओर
आपकी हे दीन-बंधु ! दृष्टि धुँधलाई है ।

रूखी-सूखी रोटिन के लाले हैं दोऊ जून
मेहनत मजूरी करि करैं जो कमाई है ।

त्राहि-त्राहि कहें बे सब कहाँ हो योगेश्वर 'श्याम'
भक्तन पै भीर पड़ी याद क्यों न आई है ?

५५. वसंत आगमन

तितली की परियाँ, नाचे फुल-बगियाँ
गुन-गुन राग भौंर, फूल को सुनाये हैं ।

अमवा की डाली काली, कोयलें कुहुक रहीं
पीयु-पीयु पपीहों के गीत मन भाये हैं ।

सौरभ सुगंध भर्‌यो, फिरे मतवारो बनो
पवन झकोरा ने यों, अरमां जगाये हैं ।

आयो मधुमास प्यास, बढ़न है लागी सखी
बाट देखूँ, आये नहीं, पिया मन भाये हैं ।

मन में उमंग जागे, उदधि तरंग जागे
अंग-अंग आज शर, अनंग के समाये हैं ।

देखो क्यारी-क्यारी सारी, मंहके हैं फुलवारीं
प्यारी-प्यारी कलियन, रंग भर आये है ।

सखियाँ नवेली चलीं, बन के पहेली चलीं
डार ज्यों चमेली चलीं, रूप-मद छाये हैं ।

मन मुसकाय चलीं, नैन झुकाय चलीं
गीत गाय-गाय चलीं, मधुमास आये हैं ।

५६. सदाबहार वसुधा

मृदुल-मंजुल, मधुमय, मधुमास;
जगाये रसिक जनो में प्यास ।
नील-नीरज में बँध मदहोश,
मधुप मधुपान करे खामोश ।
तितलियाँ नर्तन में मशगूल,
मधुर-रस पियें फूल से फूल ।
बाग में महके फुलवारी,
रंग बिखरा क्यारी-क्यारी ।
पवन सौरभ से है भरपूर,
लताएँ लगतीं जैसे हूर ।
आम्र-कुंजें हैं बौराई,
कोकिला गीत मधुर लाई ।
पपीहा पीहुका रटन करे,
स्नेह-निर्झर तेहि कंठ झरे ।
प्रकृति ने तजा जीर्ण परिधान,
नवल रंग-रूप नई पहचान ।
नवोर्मित कोमल किसलय साज,
पल्लवित कुसुमित है ऋतुराज ।
चारु चंदा से चकित चकोर
कहे क्यों दूर बसे चितचोर ।
शीत किरनों का करता पान,
बनाए रखता अपनी आन ।

विरह की टेक बड़ी न्यारी,
दूरियाँ लगतीं अति प्यारी ।
देख कुदरत के नव श्रंगार,
कर उठा कवि का हृदय पुकार ।
तोड़ नीरसता का प्रतिबंध,
उठा लेखनी रचो कुछ छंद ।
आह, क्यों मनुज बना उपहास,
रचाये विध्वंशक इतिहास ।
स्वयं को समझ बड़ा बलवान,
धरा को बना रहा स्मशान ।
दिये कुदरत ने इसको फूल,
मगर लौटाये इसने शूल ।
बड़ा जिस आँचल तले हुआ,
उसी आँचल में भरे धुआँ ।
क्षुधातृप्ति तक माफ है भूल,
बना यह नाशक सृष्टि समूल ।
छोड़ दे अब सारे उत्पात,
स्वयं जी, जीने दे बदजात ।
समुन्नत विकसित हो हर जीव,
करें मिल आओ वो तरतीव ।
प्रकृति का ये सौंदर्य अपार,
बनाए वसुधा सदा बहार ।

५७. कहीं अंधेरी, कहीं उजाली

बिम्ब - १

पत्नी : कौन मनाए ये दीवाली,
देखो मेरा डिब्बा खाली;
घर में आटा दाल नहीं है,
नाम दिया मुझको धनपाली ।
आसमान है ओढ़न अपना,
विस्तर घास फूस और छाली;
मेरे घर में पाओगे तुम,
टूटी खटिया, फूटी थाली ।
बच्चे विलख रहे रोटी को
बीतें कैसे रातें काली;
हे मालिक ! ये न्याय नहीं है
कहीं अँधेरी, कहीं उजाली ।
अधिक नहीं हम कभी माँगते,
नहीं चाहते हर खुशहाली;
मोटा खाना, मोटा पहरन
देता चल है जग के माली ।

बिम्ब - २

पति : हाय आज मैं बिना निकम्मा
कहीं काम की जगह न खाली;
जिसकी पीड़ा सही न जाये
नाम उसी का है बेहाली ।
दाम लिए बिन घर आता, जब
देती डाँट, मुझे घर-वाली;
अरे निखट्टू बलम निकम्मे
कह देती है सौ-सौ गाली ।

रास न आती मुझे जिन्दगी,
रुठ गई मुजसे खुशहाली;
अरे लाज से डूब मरुँ क्या
चुल्लूभर पानी की प्याली ?
कौन काम की ये आजादी,
उजड़ा चमन शुष्क है डाली;
भूखे-प्यासे भरें परिन्दे
बैठे मौज मनाएँ माली ।

बिम्ब - ३

कवि : कैसा आया दौर आज है
मेहनत-कश की नजर सवाली;
बना अँधेरा, जीवन-साथी
कभी न पायें, ये उजियाली ।
बचपन ही भूखा हो जिनका,
वो बन न जायें क्यों न धमाली;
कुर्सी वाले बातें करते
गुंडा-गर्दी करें मवाली ।
फिक्र नहीं जिनको रोटी की
जायँ भरे प्याली पर प्याली;
काले धंधे वाले खुश हैं,
भारत में नोटें भी जाली ।
मुखियाओं की बात न पूछो,
कूद रहे डाली से डाली;
नेता कहकर लोग बुलाते,
लगती 'श्याम' मुझे यह गाली

५८. ताकत हिन्दुस्तानी

शस्य-श्यामला धरती अपनी, संस्कृतियों की रानी;
आओ मिलकर इसे बनाएँ, ताकत हिन्दुस्तानी;
ताकत हिन्दुस्तानी, महाशक्ति कल्याणी ।

सहियाद्रि, सत्पुड़ा विन्ध्य और अरावली की घाटी;
पैदा किए सपूत अनेकों, ऐसी इनकी माटी;
नीलगिरि है बाँट रहा, मलयानिल गंध सुहानी ।

पश्चिम में गिरनार सोरठी, यश जग में फैलाए,
पूर्वांचल से यहाँ सूर्य अरुणोदय लेकर आये;
स्वर्णपरी-सी लगे धरा जब, पहने चूनर धानी ।

उत्तर में हिमगिरि बैठा है, बिखरा खेत जटाएँ
गंगा, यमुना, ब्रह्मपुत्र, रावी जिसकी कन्याएँ;
अमृत-तुल्य मधुर, पावन, जिसकी नदियों की पाती ।

सागर अरब, बंग-खाड़ी, पश्चिम-पूरब के द्वारे,
हिन्द महासागर दक्षिण में, जिसके पाँव पखारे;
कश्मीरी-सौंदर्य देखने आये जग सैलानी ।

व्यास महाभारत यश गाये, वाल्मीकि रामायण लाये
महावीर और बुद्ध महात्मा, नवचेतना जगाये;
गूँज रही नानक, नरसिंह, तुलसी, कबिरा की वानी ।

राम-कृष्ण-सी महाशक्तियाँ, इसी धरा पर आई,
जगत वन्द्य दोनों की जग ने, गौरव गाथा गाई;
अहोभाव से पूज्य जहाँ है; शिवजी और शिवानी ।

यहाँ परम पावन स्थल, मंदिर-मस्जिद, गुरुद्वारे
आराधन करते इष्टों का, जहाँ देश-जन सारे;
गुरु ग्रंथ साहब, गीता कुरआन सुनाएँ ज्ञानी ।

माता तेरी करुँ वंदना, ज्ञान अल्प है मेरा,
स्वर्गादपि गरीयसी जननी, पावन यश है तेरा;
रक्षा को तेरी तत्पर, प्रतिपल लाखों बलिदानी ।

५९. मैं करुँ तुम्हें आह्वान

है भारत के पुण्य पराक्रम, करुँ तुम्हें अभिवादन;
आगे आओ युवा देश के, करो शक्ति संपादन ।
मैं करुँ तुम्हें आह्वान ।

है मलीन भारत माता, सोये क्यों वीर जवानों;
बहू-बेटियों की नित उजड़ें, माँगें ओ दीवानो;
वृद्ध नायकों को घर बैठा, करो राष्ट्र-संचालन ।
मैं करुँ तुम्हें आह्वान ।

क्षीण हुए तन की ताकत, मन की शक्ति घट जाये;
ढलती शाम प्रखर सूरज का, तेज स्वयं घट जाये;
सदा जगत में पूज्य शक्ति ही, युवा शक्ति के साधन
मैं करुँ तुम्हें आह्वान ।

आज पड़ोसी देश हमारे घर में घुस ललकारे;
जागो राम-कृष्ण के वंशज, मूर्छा छोड किनारे;
ऐसी ताकत बनो देश की, जीतें हम समरांगण ।
मैं करुँ तुम्हें आह्वान ।

दुनियावाले आज हमें, खातिर में नहीं है लाते,
सठियाये शासकगण हमको, अपमानित करवाते;
बनकर शिवा प्रताप जगाओ, जन में शक्ति पुरातन ।
मैं करुँ तुम्हें आह्वान ।

६०. गरीबों का जीना भी है कोई जीना

हो शर्दी या गर्मी, पसीना-पसीना
गरीबों का जीना भी है कोई जीना ।
कड़ी ग्रीष्म की धूप, शर्दी शिशिर की,
सदा इनपे होती है, वर्षा कहर की;
भले जेठ हो, याकि सावन महिना ।
सदा पेट की इनको, चिन्ता सताये,
न हटते है सिर से, गरीबी के साये;
पड़े भूख खा, अश्रु अपने ही पीना ।
बिलखते हैं रहते, सदा इनके बच्चे,
निराशा के मारे, उमर के भी कच्चे;
इन्हें राश आये न, काशी-मदीना ।
कटोरा लिए हाथ, चिथड़े लपेटे,
खड़े मन्दिरों द्वार, तन को समेटे;
इन्हें अपना दामन, पड़े ग़म से सीना
है मुख पै निराशा, औ आँखों में पानी,
नहीं खिलती देखी है, इनकी जवानी;
इन्हें घर व दर, मिलता देखा कहीं ना ।
कमी अन्न की, देश में कुछ नहीं है,
व्यवस्था औ, वितरण की सारी कमी है
यहाँ अन्धे बहरे है, नेता कमीना ।
अरे धन कुबेरो, तनिक तो विचारो !
बने जिनसे धनपति, उन्हें भी उबारो;
मिले भाग इनको, तो दुःख हो कहीं ना ।

६१. कुंडलियाँ

पूजा की विधि भिन्न है, नहीं भिन्न भगवान ।
ईशा-ईश्वर एक है, एक राम-रहमान ।।
एक राम रहमान, नाम कोई भी दीजै ।
श्रद्धा जिस पर होय, उसी को आदर दीजै ।।
कहे 'श्याम' ओ बन्धु, ईश एक है नहिं दूजा ।
निराकार अविकल्प, कीजिए मनसा पूजा ।।

बुद्ध भये होंगे शिथिल, मानव तेरे गात ।
जीर्ण हुए झरने लगें, ज्यों तरुवर के पात ।।
ज्यों तरुवर के पात, धरा की शैया सोयें ।
रखें न फिर आशक्ति, दुखी हो कभी न रोयें ।।
कहे 'श्याम' ओ वृद्ध-बंधुओ मत पछताओ ।
बना ईश आधार, पार भव सागर जाओ ।।

कलियाँ मुस्काकर कहे, सुन मानव ये ज्ञान ।
झूठे चेहरे पर कभी, होय न मृदु मुस्कान ।।
होय न मृदु मुस्कान, असलियत जाती खुल है ।
कलई जब घिस जाय, रहे पीतल पीतल है ।।
कहे 'श्याम' सुन बन्धु, रंग बिन सजें न गलियाँ ।
बहुरूपी पन छोड़, कहें मानव से कलियाँ ।।

चमके बिजली घोर घन, अट्टहास जब होय ।
अँसुअन बदरा देत तब, धूरि धरा की धोय ॥
धूरि धरा की धोय, करे जल-प्लावित अवनी ।
सरिता जल-निधि पाय, पिया घर आतुर गमनी ॥
तृप्त होंय सब जीब, नीर जब जम के बरसे ।
धरा गगन सम लगे, 'श्याम' जब जुगनू चमके ॥

मन है गीता मुक्ति की, और नरक का द्वार ।
मन के जीते जीत है, मन के हारे हार ॥
मन के हारे हार, मन हि नीचा दिखलाये ।
शुद्ध-नेक मन होय, उच्च पद-मान दिलाये ॥
कहे 'श्याम' सुन बन्धु, सफल होता वह जन है ।
जो करता पुरुषार्थ, साथ रख दृढ तन मन है ॥

६२. हायकू

धरती माता
सब कुछ देती है;
पुत्र बनिये ।

क्या होगा प्रभु ।
स्वार्थ में ही रत है;
भारत वासी ।

पीकर विष,
बने थे शंकरजी;
देवाधिदेव

रातों का राजा,
सौंदर्य का प्रतीक;
सुहाना चंदा

ईमानदारी
भारतीय नेता में;
असंभव है ।

अँधेरी रात,
बन गया जीवन;
भोर में देर ।

संघर्षरत,
जीवन का नाम ही;
जिन्दा दिली है ।

किससे कहें,
निज मन की व्यथा;
अनाथ बच्चे ।

पलायनता,
मौन से बदतर;
जीवनांत है ।

दीवारें चिन
दूरियाँ न बढाओ;
हाथ मिलाओ ।

रोशनी में तो,
दुनिया दिखती है
अँधेरे में मैं

सूरज दादा,
जग जीवनाधार;
प्रत्यक्ष देव ।

छल प्रपंच,
पापी पेट के लिए,
शर्म कीजिए

रूठिये मत,
आदत बिगड़ेगी
मान घटेगा ।

प्यार गंगा है,
डूब गया सो तरा;
छका सो डूबा ।

खुशियाँ बाँटों
किसी को दुःख न दो;
दुआ मिलेगी ।

६३. वनचरों की रेलगाड़ी

वनचर एक दिन हुए इकट्ठे
करी सभा मिल सबने,
बहुत समय तकलीफ उठाई
बोले सब है हमने ।

दूर-दूर तक यात्रा करते
पैदल पडता चलना;
पानी-घास खत्म होने पर
जंगल पड़े बदलना ।

मानव ने है रैल बनाई
हम क्या उससे कम हैं;
अपनी रेल बना बैठेंगे
यात्री बनकर हम हैं ।

बन्दर बोला, हूप-हूप मैं,
बनूँ ड्रायवर बाँका;
शीटी देकर रेल चलाऊँ
सुन लो भालू काका ।

खरहा बोला उछल-कूदकर
बनूँ गार्ड मैं भाई;
लाल-हरी झंडी दिखलाऊँ
छुक-छुक गाड़ी आई ।

कौन बने स्टेशन मास्टर
गीदड़ कहे सयाना ?
जिसके सूचन से गाड़ी का
होगा आना-जाना ।

काम तुम्हीं यह कर सकते हो
चूहा कुट-कुट बोला;
बुद्धि तुम्हारी बड़ी तेज है
सच यह आने सोला ।

खो-खो करती कहे लोमड़ी
बात मेरी भी मानो;
मुझको बना टिकट चेकर दो
सुन लो ओ नादानों ।

बिना टिकट के प्राणी कोई
यात्रा नहीं करेगा;
मानव जैसा अंधा-धुंधी
चक्कर नहीं चलेगा ।

भालू काका बनें सिपाही
सजग रेल के प्रहरी;
चोर लुटेंरों की चल पाये
फिर चाल न गहरी ।

बोले सब खुश होकर यारों ।
अपनी रेल चलेगी;
अब से हमको पैदल यात्रा
करनी नहीं पडेगी ।

६४. आई बहार (गीत)

महका हुआ पवन ये, मस्ती भरा हुआ है ।
आई बहार वन-वन गुलजार सा हुआ है ।
मन देखता सपन ये, पंछी बना हुआ है ।
दे खोल अपनी पाँखे, तू क्यों डरा हुआ है ।

कोयल में कूक प्यारी, आई कहाँ से बोलो;
बुलबुल के राग का भी, कोई तो भेद खोलो
खुशबू भरी हवाएँ, मदहोश कर रही है
लगता है आज मौसम, जादू भरा हुआ है ।

झीलों में खिल रही हैं कमलों की शोख कलियाँ;
फूलों पे नाचती हैं, रंगी जवाँ तितलियाँ;
है गुनगुना के भंवरे, कलियों के होट-चूमे
हर दिल यहाँ नशे में, पागल बना हुआ है ।

बाहो में अपनी बेलें, वृक्षों को भर के भेंटें,
आगोश में किनारे, नदियों को हैं समेटे,
आकाश से सितारे हैं, झाँकते जमी पै
सागर में उनका प्यारा, चंदा छिपा हुआ है ।

६५. मुक्तक काव्य

देखिये जनतंत्र में, कैसा तमाशा हो रहा,
आज भारत देश है, गौरव पुरातन खो रहा;

हर तरफ ही लूट, भ्रष्टाचार औ व्यभिचार है
पापियों के भार को, सामान्य जन है ढो रहा ।

बुद्धिशाली वर्ग सोया, आज तक जागे नहीं,
क्यों कोई चाणक्य बढ़कर आ रहा आगे नहीं;

राह में मिल जायेंगे फिर, सैंकड़ों ही चन्द्रगुप्त
नष्ट हों धननंद सारे, एक भी भागे नहीं ।

आज जनता, द्रौपदी, जैसी हुई बेहाल है
ये भी दुर्योधन, दुसासन, शकुनियों की चाल है;

भीष्म, द्रोणाचार्य, कृप, बैठे नज़र नीची किए
लाज का रक्षक वही हरि, नंदजी का लाल है ।

हे युवाओं देश के, आगे बढ़ो ललकार कर !
छीन लो, अधिकार अपना, द्रोहियों को मारकर;

बुजदिली से कामयाबी, मिल नहीं सकती कभी
बन के अर्जुन-भीम, कौरव दल का दो संहार कर ।

o o o

परिचय

नाम : श्यामपाल सिंह चौहान, "श्याम"

पिता का नाम : श्री भूमिराज सिंह चौहान

जन्म तिथि : २२/०५/१९४४

जन्म स्थल : फ़र्रूखाबाद (उ.प्र.)

शिक्षा : बी.ए., बी.एड्.

सेवा कार्य : अहमदाबाद की नगर निगम की शालाओं में सन् १९६४ से सन् २००२ तक शिक्षण कार्य करते हुए प्रधानाध्यापक पद से सेवा निवृत्त।

अभिरुचि : स्वाध्याय, लेखन और संगीत

साहित्य सेवा : गीत, ग़ज़ल, दोहा, कुँडलिया, हाइकू एवं मुक्तक आदि विधाओं में लेखन कार्य।

गुजरात साहित्य अकादमी द्वारा स्वीकृत ग़ज़ल संग्रह 'बताओ क्या है हल' प्रकाशनाधीन। साहित्यालोक अहमदाबाद के सहयोगी काव्य संकलन "जलते दीपक", "उजाले की ओर", "संवेदना के स्वर" एवं मा. जे. पुस्तकालय के संकलन "मंजूषा" भाग : १-२ में रचनाएँ प्रकाशित। इसके अतिरिक्त कयी अन्य संकलनों- कानपुर से " दोहा दीप " एवं कानपुर के ही अन्य प्रकाशन " स्वातंत्र्योत्तर कवि- कवयित्रीयाँ "। ग्वालियर से "साहित्यायन", नयी दिल्ली के विश्व पुस्तक प्रकाशन से "संस्कृति के कमल" एवं लखनऊ की "चेतना स्रोत" आदि में विभिन्न विधाओं की रचनाएँ प्रकाशित।

ISBN : 978-81-955940-0-9